BEDD115DST

हिंदी भाषा शिक्षण

बी. एड.

प्रथम वर्ष के लिए

डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ ट्रान्सलेशन एण्ड पब्लिकेशन्स
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

© मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
प्रकाशन क्रमांक -16
ISBN: 978-93-80322-22-3
द्वितीय संस्करणः जुलाई 2019

प्रकाशक : रजिस्ट्रार, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
प्रकाशन : जुलाई 2019
प्रतियां : 1000
मुद्रित : प्रिण्ट टाईम एण्ड बिज़नेस एण्टरप्राइज़ेज़, हैदराबाद

हिंदी भाषा शिक्षण

सम्पादक
डा. अश्वनी
सहायक प्रोफ़ेसर, डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ डिस्टेन्स एजुकेशन
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

रजिस्ट्रार की ओर से
डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ डिस्टेन्स एजुकेशन
ने
डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ ट्रान्सलेशन एण्ड पब्लिकेशन्स
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
गच्चीबौली, हैदराबाद–500032

के सहयोग से प्रकाशित की

E-mail: directordtp@manuu.edu.in

दूर शिक्षा के छात्र–छात्राएं अधिक जानकारी के लिए निम्नलिखित पते पर सम्पर्क कर सकते हैं

डॉयरेक्टर

डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ डिस्टेन्स एजुकेशन

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

गच्चीबौली, हैदराबाद–500032

Phone No.: 1800-425-2958, website: www.manuu.ac.in

सूची

			पृष्ठ
	सन्देश	कुलपति	5
	दो शब्द	डॉयरेक्टर, डीटीपी	6
	प्रस्तावना		7
	इकाई	लेखक	
1	भाषा का स्वरूप, एवं भाषा की भूमिका	डॉ० अश्वनी सहायक प्रोफेसर दूर शिक्षा निदेशालय मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद	10
2	भाषायी दक्षताएं	डॉ. तलमीज़ फातिमा सहायक प्रोफेसर कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन, भोपाल मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद	30
3	भाषा शिक्षण की विधियां एवं उनका विश्लेषण	डॉ० मो० हनीफ अहमद सहायक प्रोफेसर कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन, आसनसोल मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद	52
4	हिंदी शिक्षण कौशलों का विकास एवं सूक्ष्म शिक्षण	बनवारी लाल मीणा सहायक प्रोफेसर दूर शिक्षा निदेशालय मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद	74
5	भाषा–साहित्य और सौंदर्य	पूजा सिंह सहायक प्रोफेसर कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन, नूह मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद	88

संपादक – डॉ. अश्वनी
सहायक प्रोफेसर
दूर शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

भाषा संपादक
डॉ. तबस्सुम बेगम एवं इबरार खान,
अतिथि प्राध्यापक, दूर शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

संदेश
कुलपति

संसद के अधिनियम के अनुसार मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय की स्थापना हुई, इसका प्राथमिक उद्देश्य इस केन्द्रीय विश्वविद्यालय द्वारा उर्दू में उच्च शिक्षा का प्रचार प्रसार है। यह मूल भूत बिन्दु इसे दूसरे विश्वविद्यालयों से अलग करता है। इसका उद्देश्य उर्दू के माध्यम से ज्ञान का विकास व इस सोच के साथ समसामयिक ज्ञान को उर्दू के लोगों तक पहुँचाना है। एक लम्बे अर्से से उर्दू का दामन ज्ञान की सामग्री से लगभग ख़ाली रहा है। किसी भी पुस्तकालय या पुस्तक विक्रेता की अलमारियों का सरसरी जायज़ा भी इस बात की गवाही देता है कि उर्दू भाषा केवल ''साहित्य'' की कुछ विधाओं तक सीमित होकर रह गयी है। लगभग यही स्थिति सभी समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं में देखने को मिलती है। ये रचनाएं कभी पाठक को प्रेम प्रसंग की टेढ़ी–मेढ़ी राहों की सैर करवाती हैं तो कभी भावुकता से लबरेज़ राजनैतिक समस्याओं में उलझा देती हैं, कभी किसी विशेष पंथ और चिन्तन वाली पृष्ठभूमि में धर्म की व्याख्या करती हैं तो कभी शिकायतों से मन को भारी करती हैं! उर्दू समाज के आज के दौर के मुख्य ज्ञानात्मक मुद्दे चाहे स्वंय उसके स्वास्थ व भलाई से सम्बन्धित हों या आर्थिक व व्यापार प्रबन्ध से, चाहे उन मशीनों और यंत्रों से सम्बन्धित जिनके बीच वह जीवन गुज़ार रहा है या उसके परिवेश की समस्यायें हों। वह इन सभी से अन्जाने हैं। आम लोगों तक ज्ञान व जानकारी के प्रति इन चीज़ों की पहुंच न होने से लोगों में रूचि की कमी का माहौल बन गया है, इसी के कारण उर्दू आबादियों में ज्ञान की कमी पायी जाती है। यही वो चुनौती है जिस से उर्दू विश्वविद्यालय को दो चार होना है। पाठ्यक्रम सामग्री की हालत भी कुछ बेहतर नही है। स्कूली सतह पर उर्दू किताबों की कमी के चर्चे हर साल सुनने को मिलते हैं। उर्दू विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम ही उर्दू है, और इसके विभिन्न विभागों में लगभग सभी विषयों के पाठ्यक्रम मौजूद है अतः पाठ्यक्रम से सम्बन्धित पढ़ाई जाने वाली सामग्री को किताब के तौर पर तैयार करना, इस विश्वविद्यालय का मुख्य उत्तरदायित्व है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनुवाद व प्रकाशन निदेशालय की स्थापना की गयी है। मुझे इस बात की बेहद ख़ुषी है कि अपनी स्थापना के एक साल के अंदर ही ये नया वृक्ष फल देने लगा है। इस निदेशालय के ज़िम्मेदारों की अनथक मेहनत व प्रयासों और लेखकों के योगदान से किताबों के प्रकाशन का सिलसिला शुरू हो गया है। मुझे विश्वास है कि कम से कम समय में पाठ्यक्रम और सहपाठ्यक्रम की पुस्तकों के प्रकाशन के बाद इसके ज़िम्मेदार उर्दू अवाम के लिए भी सरल व समझ में आने वाली भाषा में पुस्तकों, पत्रिकाओं व शिक्षण सामग्री का प्रकाशन शुरू करेंगे ताकि हम इस विश्वविद्यालय के अस्तित्व और इसमें अपनी मौजूदगी का हक़ अदा कर सकें।

डॉ. मोहम्मद असलम परवेज़
प्रथम सेवक
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

दो शब्द

हिन्दुस्तान में उर्दू माध्यम से शिक्षा की प्रगति न हो पाने के कारणों में एक महत्वपूर्ण कारण पाठ्यक्रमों हेतु उर्दू में किताबों का न होना भी है। इसके अलावा कुछ अन्य कारण भी रहे हैं लेकिन उर्दू माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम की अच्छी किताबें उर्दू में न मिल पाने की शिकायत हमेशा बनी रही है। सन् 1998 ई. में जब भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय स्तर के विश्वविद्यालय 'मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी' की स्थापना की गई तो बड़े स्तर पर उच्च शिक्षा के लिए मात्र पाठ्यक्रम की किताबों की ही नहीं बल्कि सन्दर्भ ग्रन्थों तथा विभिन्न प्रकार के विषयों की किताबों की भी ज़रूरत महसूस हुई।

मौजूदा कुलपति डॉ. मोहम्मद असलम परवेज़ ने यहाँ पदभार ग्रहण करने के साथ ही उर्दू किताबों की छपाई के सिलसिले में बहुत तेज़ी से फ़ैसला लिया और डॉयरेक्टोरेट ऑफ़ ट्रान्स्लेशन की स्थापना की गई। इस डॉयरेक्टोरेट में बड़े पैमाने पर पाठ्यक्रम व अन्य ज्ञानवर्धक किताबों की तैयारी का काम जारी है। यह कोशिश की जा रही है कि तमाम पाठ्यक्रमों की पुस्तकों का लेखन उर्दू में सीधे तौर पर विषय–विशेषज्ञों से ही करवाया जाए। महत्वपूर्ण तथा सुप्रसिद्ध पुस्तकों के उर्दू में अनुवाद की कोशिश की जा रही है। उम्मीद है कि ये डॉयरेक्टोरेट पूरे देश में छपाई के मामले में एक बड़ा केन्द्र साबित होगा और यहाँ से अधिक संख्या में उर्दू किताबें प्रकाशित होंगी। डॉयरेक्टोरेट ने फ़रवरी 2018 में प्राणी विज्ञान एवं कीटविज्ञान से सम्बन्धित शब्दकोश से अपना प्रकाशन शुरु कर दिया है।

प्रस्तुत पुस्तक बी. एड. प्रथम वर्ष के विद्यार्थियों के लिए तैयार की गई है। इसी प्रकार बी.एड. प्रथम वर्ष की 17 पुस्तकें एक साथ प्रकाशित की जा रही हैं। ये किताबें विशेष रूप से दूर शिक्षा के विद्यार्थीयों के लिए हैं। इन किताबों से संस्थागत विद्यार्थी भी फ़ायदा उठा सकेंगे। इसके अलावा ये किताबें शिक्षा–शिक्षण के आम विद्यार्थी, अध्यापक तथा पढ़ने में रुचि रखने वालों के लिए भी ज्ञानवर्धक साबित होंगी।

ये स्वीकारोक्ति भी आवश्यक है कि इस किताब की तैयारी में सीधे तौर पर कुलपति महोदय का नेतृत्व और संरक्षण भी शामिल है। उनकी व्यक्तिगत रुचि के बिना इन पुस्तकों का प्रकाशन मुमकिन नहीं था। दूर शिक्षा निदेशालय और शिक्षा विभाग के अध्यापकगण एवं प्रतिष्ठित पदों पर बैठे लोगों की मदद भी शामिल रही है जिसके लिए उनका शुक्रिया अदा करना भी ज़रूरी है।

उम्मीद है कि अध्ययनकर्ता व विषय विशेषज्ञ इस सन्दर्भ में हमें अपने सुझाव देंगे।

प्रो. मोहम्मद ज़फ़रुददीन
डॉयरेक्टर, डायरेक्टोरेट ऑफ़ ट्रान्स्लेशन एण्ड पब्लिकेशन्स
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

पाठ्यक्रम परिचय

हिंदी भाषा शिक्षण पाठ्यक्रम के विशेष उद्देश्य

- भाषा की अलग–अलग भूमिकाओं को जानना।
- भाषा सीखने की सृजनात्मक प्रक्रिया को जानना।
- भाषा के स्वरूप और व्यवस्था को समझना।
- स्कूल की भाषा, बच्चों की भाषा के बीच के संबंध को जानना।
- भाषा के संदर्भ में पढ़ने के अधिकार, शांति और पर्यावरण के प्रति सचेत होना।
- भाषा सीखने के तरीके और प्रक्रिया को जानना और समझना।
- पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण कर कक्षा विशेष और बच्चों की समझ के अनुसार ढ़ालना।
- भाषा और साहित्य के संबंध को जानना।
- हिंदी भाषा के विविध रूपों और अभिव्यक्तियों को जानना।
- भावों और विचारों की स्वतंत्रता अभिव्यक्त करना।
- भाषायी बारीकियों के प्रति संवेदनशील होना।
- विद्यार्थियों की सृजनात्मक क्षमता को पहचानना।
- बच्चों के भाषायी विकास के प्रति समझ बनाना और उसे समुन्नत करने के लिए विद्यालय में तरह–तरह के अवसर जुटाना।
- भाषा के मूल्यांकन की प्रक्रिया को जानना।
- साहित्यिक और गैर साहित्यिक मौलिक रचनाओं की सराहना की समझ बनाना।
- भाषा सीखने–सिखाने के सृजनात्मक दृष्टिकोण को समझना।

हिंदी भाषा शिक्षण के इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य विद्यालय स्तर पर हिंदी शिक्षण के लिए प्रभावी शिक्षक तैयार करना है। इस पाठ्यक्रम में यह प्रयास किया गया है कि आप हिंदी शिक्षण के शिक्षाशास्त्रीय सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करके उनके व्यावहारिक प्रयोग करने की क्षमता आप में विकसित हो सके। इसमें आपको ऐसी सामग्री प्राप्त करने का प्रयास किया गया है जिससे आपके भाषा तथा साहित्य विषयक ज्ञान का नवीकरण होने के साथ–साथ उसका समुन्नयन व संवर्धन भी हो।

हिंदी को राजभाषा का दर्जा स्वतंत्र भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर, 1949 को दिया था। भारतीय संविधान की धारा 350–क. में प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं और धारा 351 में हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश दिए गये है । इस तरह हिंदी के पठन व शिक्षण को संवैधानिक रूप से मान्यता दी गई है। वर्तमान में हिंदी में रोजगार की अपार संभावनाएं बढ़ गई है जैसे, हिंदी में विज्ञापन, हॉलीवुड फिल्मों की डबिंग, हिंदी समाचार चैनल,

हिंदी फिल्म का लेखन, हिंदी गीत लेखन, हिंदी कॉल सेंटर, गूगल में हिंदी भाषा। भारत सरकार के सभी विभागों, बैंको व एन.जी.ओ. में हिंदी अधिकारी। अध्यापन के क्षेत्र में भी हिंदी अध्यापक की मांग बढ़ती जा रही है। सूचना व संप्रेषण के युग में सोशल मीडिया बुनियादी जरूरत बन गया है। इंटरनेट की पहुँच ग्रामीण क्षेत्रों तक आसानी से हो गई हैं जिस कारण भारत में आज हिंदी का बोलबाला बढ़ रहा है। आज हिंदी के शिक्षक को इन सभी बातों को ध्यान में रखना होगा। सूचना व संप्रेषण तकनीक ने सभी भाषाओं के पढ़ने–पढ़ाने के तौर तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। आज हिंदी शिक्षक को भी वर्तमान दौर में नई शिक्षण विधियों से परिचित होना होगा जिससे वह शिक्षण की प्रक्रिया में अपने आपको पिछड़ा महसूस ना करें। इस पाठ्यक्रम में यह कोशिश की गई है आप हिंदी की आधुनिक शिक्षण विधियों से परिचित होकर कक्षा में आसान तरीकों से हिंदी अध्यापन करें जिससे विद्यार्थी व अध्यापक दोनों सहजता अनुभव करें।

हिंदी भाषा शिक्षण के इस पाठ्यक्रम में पांच इकाईयां है।

इकाई 1– भाषा का स्वरूप, एवं भाषा की भूमिका

भाषा का अर्थ, स्वरूप और महत्व। भाषा के विभिन्न रूप– घर की भाषा (मातृ भाषा) और स्कूल की भाषा (राज भाषा) समूचे पाठ्यक्रम में भाषा, ज्ञान सृजन और भाषा। माध्यम भाषा, विषय के रूप में भाषा और माध्यम भाषा में अंतर, विविध भाषिक प्रयुक्तियां, बहुभाषिक कक्षा। भारतीय संविधान के संदर्भ में भाषा (धारा 343–351)। विभिन्न भारतीय शिक्षा समितियों व आयोगों के संदर्भ में भाषा, कोठारी कमीशन, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, पी.ओ.ए 1992।

इकाई 2– भाषायी दक्षताएं

भाषायी दक्षताएं– श्रवण, वाचन, पठन एवं लेखन ।

श्रवण एवं वाचन– सुनने का कौशल, बोलने का लहजा एवं शैली– भाषाई विविधता और हिंदी पढ़ने पढ़ाने पर इसका प्रभाव, सुनने और बोलने के कौशल विकास के स्रोत और सामग्री, हिंदी शिक्षण के संदर्भ में रोल प्ले, कहानी सुनाना, परिस्थिति के अनुसार संवाद, भाषा लैब, मल्टीमीडिया तथा मौलिक सामग्री की सहायता से संप्रेषणात्मक वातावरण का निर्माण।

पठन– पढ़ने के कौशल, पढ़ने के कौशल विकास में बोध का महत्व, मौन और मुखर पठन, गहन–पठन, विस्तृत पठन, आलोचनात्मक पठन, पढ़ने के कौशल में सृजनात्मक साहित्य कहानी, कविता आदि।

लेखन– लिखने के चरण, लेखन प्रक्रिया, सृजनात्मक लेखन, औपचारिक और अनौपचारिक लेखन (कहानी, संवाद, डायरी, पत्र, रिपोर्ट, समाचार आदि)।

इकाई 3– भाषा शिक्षण की विधियॉ एवं उनका विश्लेषण

व्याकरण अनुवाद प्रणाली, प्रत्यक्ष प्रणाली, ढ़ॉचागत प्रणाली, उद्देश्यपरक संप्रेषणात्मक प्रणाली।

इकाई 4– हिंदी शिक्षण कौशलों का विकास एवं सूक्ष्म शिक्षण

शिक्षण कौशल– अर्थ, परिभाषा, महत्व, हिंदी शिक्षण के वांछित कौशल और कौशल शिक्षण पर आधारित पाठ योजना का निर्माण।

सूक्ष्म शिक्षण– अर्थ, परिभाषा, विशेषतायें, अवस्थायें व सूक्ष्म शिक्षण की प्रक्रिया एवं सोपान।

इकाई 5– भाषा–साहित्य और सौंदर्य

सृजनात्मक भाषा के विविध रूप– साहित्य के विविध रूप, स्कूली पाठ्यक्रम में साहित्य को पढ़ना–पढ़ाना। हिंदी शिक्षण के उद्देश्य एवं हिंदी की विभिन्न विधाओं को पढ़ाने के उद्देश्य साहित्यिक अभिव्यक्ति के विविध रूप– कविता को पढ़ना–पढ़ाना, गद्य की विविध विधाओं को पढ़ना–पढ़ाना। नाटक को पढ़ना–पढ़ाना, समकालीन साहित्य की पढ़ाई, बाल साहित्य, दलित साहित्य, स्त्री साहित्य। हिंदी की विविध विधाओं के आधार पर गतिविधियों का निर्माण, कविता, कहानी, नाटक, निबंध की पाठ विधि तैयार करना।

इकाई – 1 : भाषा का स्वरूप एवं भाषा की भूमिका

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भाषा का अर्थ

1.4 भाषा की परिभाषा

1.5 भाषा के आधार

1.6 भाषा का स्वरूप

1.7 भाषा का महत्व

1.8 भाषा के विभिन्न रूप

1.8.1 घर की भाषा (मातृ भाषा)

1.8.2 स्कूल की भाषा

1.8.3 ज्ञान सृजन और भाषा

1.8.4 माध्यम भाषा

1.8.5 विषय के रूप में भाषा और माध्यम भाषा में अंतर

1.8.6 बहुभाषिक कक्षा

1.8.7 राजभाषा

1.9 संविधान और शिक्षा समितियों की रिपोर्ट में भाषा–भाषाओं की स्थिति।

1.9.1 भारतीय संविधान के भाग 17 में धारा 343–351 तक भारत में भाषाओं संबंधी प्रावधान।

1.9.2 शिक्षा समितियों के रिपोर्ट में भाषा–भाषाओं की स्थिति

1.9.2.1 कोठारी कमीशन – 1964–66

1.9.2.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986

1.9.2.3 कार्यक्रम का कार्यान्वयन – 1992 (Programme of Action 1992)

1.10 अभ्यास प्रश्न
1.10.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1.10.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1.11 संदर्भ

1.1 प्रस्तावना

हिंदी शिक्षण का विस्तृत अध्ययन करने से पहले यह समझना जरूरी है कि मानव जीवन में भाषा की सामान्यतः क्या भूमिका है? मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक गतिविधियों के लिए मनुष्यों को एक दूसरे से बातचीत करनी होती है। भाषा अभिव्यक्ति का साधन है। मनुष्य भाषा के द्वारा सहजता व सरलता से एक दूसरे के क्रियाकलापों व आचार–विचार को समझ सकता है। यदि हम अपने आस–पास संसार के दूसरे जीवों पर ध्यान दें तो सभी प्राणियों के पास अपने आपको अभिव्यक्त करने के साधन हैं जैसे – भाव मुद्राओं व ध्वनि संकेतों के द्वारा वे एक दूसरे के विचारों को समझते है। दुनिया में मनुष्य के द्वारा भाषा का निर्माण एक देन है। मनुष्य के द्वारा जो भी ज्ञान संजोया गया है वह सभी भाषा के द्वारा ही संभव हो पाया है। इस तरह भाषा को एक संकल्पना की तरह समझ कर आप हिंदी शिक्षण को अच्छी तरह समझ सकते हैं।

1.2 उद्देश्य

- भाषा का अर्थ व परिभाषा को समझ कर हिंदी भाषा शिक्षण की समझ बना पाएंगे।
- भाषा के आधारों को समझ कर उसे हिंदी शिक्षण के संदर्भ में प्रयोग कर सकेंगे।
- भाषा के स्वरूप व महत्व को समझ कर हिंदी शिक्षण के स्वरूप व महत्व को समझ पाएंगें।
- भाषा के विभिन्न रूपों को समझ कर उसे हिंदी शिक्षण के संदर्भ में जान जायेंगे।
- भारतीय संविधान और शिक्षा समितियों के रिपोर्ट में भाषाओं की स्थिति की व्याख्या कर पाएंगे।

1.3 भाषा का अर्थ

भाषा के द्वारा ही मनुष्य ने अपनी संस्कृति व सभ्यता को विकसित कर भावी पीढ़ी तक पहुँचाया है। समाजवैज्ञानिकों का मानना है कि भाषा का विकास सामाजिक अंतः क्रिया द्वारा होता है। इस तरह भाषा मनुष्य के विकास की आधारशिला है। भाषा शब्द 'भाष्' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'बोलना'। अतः भाषा में बोलना समाहित है। हम अपने आस– पास के लोगों के लिए बोल कर विचार प्रकट करते हैं और दूर के लोगों के लिए लिख कर विचार प्रकट करते हैं। इस तरह भाषा में बोलना व लिखना दोनों समाहित है। भारत में बहुत सारी बोलियां बोली जाती हैं जैसे – बघेली, कुमायुँनी, गढ़वाली, मेवाती, ब्रज व अवधी इत्यादि। मौखिक अभिव्यक्ति के लिए प्रत्येक क्षेत्र में उस क्षेत्र की बोली का प्रयोग होता है परन्तु लिखित रूप में भाषा का ही प्रयोग किया जाता हैं। समय के अनुसार बोलियाँ विकसित तौर पर भाषा का रूप धारण कर लेती हैं। इस तरह भाषा बिना हम शिक्षा के किसी भी क्रियाकलाप की कल्पना नहीं कर सकते इसलिए भाषा शिक्षण का महत्व अपने आप में बढ़ जाता है। भाषा संस्कृति का आधार, साहित्य का आधार, सामाजिक प्रक्रिया का आधार, मनुष्य के चिंतन का माध्यम व संप्रेषण का भी आधार

है। भाषा से ही हमारा बौद्धिक, मानसिक, संवेगात्मक व सामाजिक विकास हुआ है। एक तरह से भाषा से ही मनुष्य का विकास हुआ है।

1.4 भाषा की परिभाषा

कुछ भाषा वैज्ञानिकों के द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं –

स्वीट के अनुसार – ध्वन्यात्मक (ध्वनि से) शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।

पतंजलि के अनुसार– भाषा वह व्यापार है जिससे हम वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।

प्लेटो ने सोफिस्ट में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषाओं में थोड़ा ही अंतर है। विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।

क्रोचे के अनुसार, भाषा अभिव्यक्ति की दृष्टि से उच्चरित एवं सीमित ध्वनियों का संगठन है।

इस तरह कोई भी परिभाषा अपने आप में पूर्ण नहीं हैं। प्रो. रमन बिहारी लाल की व्याख्या इस संबंध में पूर्ण दिखाई देती है– भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति एवं सामाजिक अंतः क्रिया के लिए किसी समाज द्वारा स्वीकृत जिन ध्वनि संकेतों का प्रयोग होता है उसे बोली कहते हैं, कई समान बोलियों की प्रतिनिधि बोली को विभाषा कहते हैं और कई समान विभाषाओं की प्रतिनिधि शिष्ट एवं परिगृहीत विभाषा को भाषा कहते हैं। भाषा परिवर्तनशील एवं विकासशील होती है। इस तरह भाषा वह साधन है जिसके द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपने विचार, भाव या इच्छा प्रकट करता है और दूसरे के विचार, भाव आदि को ग्रहण करता है।

किसी भी भाषा के दो रूप होते हैं – एक – मौखिक और दूसरा – लिखित।

प्राचीन काल से ही भाषा का ध्वन्यात्मक रूप रहा है। किसी भी समाज द्वारा अपने विचारों के आदान प्रदान के लिए ध्वनि संकेतों के समूह को मौखिक भाषा कहते हैं। मानव के प्रारंभिक काल में ध्वनि संकेतों का ही प्रयोग किया जाता था। एक तरह से ध्वनि के माध्यम से ही वह अपनी संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करता है। शिक्षा का शुरूआती रूप मौखिक ही था। आजकल भी हम प्रतिदिन के व्यवहार में भाषा को ध्वनि रूप में ही प्रयोग करते है। इस तरह आज भी अधिकांश सामाजिक व्यवहार ध्वनि के माध्यम से मौखिक रूप में किया जाता है। ध्वनि ही विचारों और भावों की संवाहिका है। आज सूचना तकनीक के युग में स्मार्टफोन व कम्प्यूटर ने भाषा के ध्वनि रूप को बढ़ा दिया हैं। भाषण, वाद–विवाद, टेलीफोन, टेपरिकॉर्डर, सी.डी., कम्प्यूटर, स्मार्टफोन, बोलचाल में भाषा का ध्वनि रूप देखने को मिलता है।

भाषा का ध्वनि रूप स्थाई नहीं माना जाता है इसलिए लिखित रूप में भाषा हमेशा मौजूद रहती है। लिपि ने ही मौखिक भाषा को लिखित रूप प्रदान किया है। अपने से दूर स्थित लोगों तक संदेश पहुँचाने के लिए लिपि रूप की ही आवश्यकता पड़ती है। लिपि रूप हमेशा के लिए स्थाई हो जाता है जिसको आने वाली पीढ़ी भी आसानी से पढ़कर आत्मसात कर सकती है। इतिहास, संस्कृति, ज्ञान विज्ञान एवं उसकी विकास प्रक्रिया सभी को लिखित भाषा के द्वारा ही सुरक्षित रखा जा सकता हैं। आज सूचना तकनीकी के युग में भी लिखित भाषा का महत्व ज्यादा बढ़ गया है। किताबों की रचना, पत्र लिखना, कार्यालय का काम भाषा का लिखित रूप है। भाषा को लिखित रूप देने के लिए उसकी लिपि का ज्ञान होना जरूरी है जैसे–शब्दों की संख्या, बनावट व वाक्य रचना। हर भाषा को लिखित रूप के लिए उसकी अपनी प्रकृति है जिसको जानना जरूरी है। भाषा के व्याकरणिक रूप को समझना जरूरी है जिससे कि लिखे को समझ सकें। यदि हिंदी भाषा को देखा जाए तो जैसी ध्वनि या उच्चारण होगा लिखित रूप भी वैसा ही होगा। शब्दों को हम भाषा का शारीरिक व संरचनात्मक रूप मान सकते है।

1.5 भाषा के आधार

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य भाषा को सामाजिक अन्तः क्रिया द्वारा ही सीखता है। मनुष्य को अपनी दैनिक गतिविधियों को पूरा करने के लिए अपने हाव–भाव अभिव्यक्त करने पड़ते है जिसके लिए वह अपने शारीरिक अंगो का प्रयोग करते हुए भाषा के माध्यम से अपनी आवश्यकताओं व इच्छाओं को दूसरों तक पहुँचाता है। इस तरह भाषा के भौतिक आधार में हम अपने ओष्ठ, नाक, जीभ, गला इत्यादि के सहयोग से ध्वनियाँ मुखावयवों से उत्पन्न करते हैं। भाषा सीखने के लिए सामाजिक माहौल का होना जरूरी है। सामाजिकता भाषा का मूल आधार है और इस आधार पर मनुष्य के शारीरिक अंगों का प्रयोग भौतिक आधार बन जाता है। हर व्यक्ति का संबंध अपनी संस्कृति से होता है और भाषा का संस्कृति से गहरा रिश्ता है। समाज विशेष का माहौल व संस्कृति भाषा का स्वरूप बनाती है। भाषा शिक्षण के अध्यापक को विद्यार्थियों के सामाजिक पर्यावरण की ओर ध्यान देना चाहिए जिससे वे बच्चों के स्वभाव को समझकर अध्यापन कर सकते हैं। अपने हाव–भाव व जरूरतों को पूरा करने के लिए व्यक्ति के मन में विचार आते हैं। उन विचारों को व्यक्त करने के लिए भाषा की जरूरत पड़ती है जो कि मानसिक क्रिया के माध्यम से सम्भव है तो बिना विचारों के भाषा अस्तित्व में नहीं आ सकती। इस तरह समाज में जीवन जीने के लिए भाषा का आधार हमारे मानसिक विचार हैं, जिससे हम सोचते, पढ़ते, लिखते हैं। इस तरह विचार ही हमारे भाव हैं जिनको हम भाषा के माध्यम से व्यक्त करते हैं। भाषा शिक्षण का शिक्षक विद्यार्थियों की सोचने की विचार प्रक्रिया को समझकर विद्यार्थियों की भाषा को सशक्त बना सकता है। भाषा से विद्यार्थियों के मानसिक आधार को भी सशक्त बनाया जा सकता है।

1.6 भाषा का स्वरूप

प्रत्येक भाषा का अपना स्वरूप होता है। जिस तरह हर संस्कृति व समाज का भाषा पर प्रभाव पड़ता है उसी तरह भाषा भी विकास व परिवर्तन के कालों से गुजरती रहती है। प्रत्येक भाषा की अपनी प्रकृति होती है लेकिन इसके स्वभाव को जानकर हम शिक्षण कार्य में आसानी से अपनी समझ बना सकते हैं। भाषा के स्वरूप की निम्न विशेषताएं हो सकती हैं।

- भाषा में मनुष्य अपने भावों को व्यक्त करने के लिए विभिन्न ध्वनियों का इस्तेमाल करता है जिससे वह अपने व दूसरे के भावों को समझ सके। ध्वनियों का सार्थक रूप होता है जिससे इनको समझा जा सकता है। ध्वनियों के कारण भाषा का आधार व प्रारंभिक रूप मौखिक है। भाषा मौलिक रूप से मौखिक प्रकृति को अपना कर ही उसका लिखित रूप धारण करती है। इस तरह मौखिक ध्वनियों से भाषा की उत्पत्ति हुई।
- भाषा एक प्रकार से लिखित रूप में चिह्नों के माध्यम से व्यक्त की जाती है। प्रत्येक भाषा में अपने वर्ण–अक्षर हैं, उनकी बनावट व वाक्य रचना का अपना स्वरूप है। भाषा के प्रचार व प्रसार में चिह्नों ने बड़ी भूमिका निभाई है जिससें आज सभ्यता व संस्कृति के पास अनुभव व ज्ञान का असीमित भंडार सुरक्षित है।
- भाषा को यदि दुनियावी तौर पर देखा जाए तो यह मनुष्य की विशेषता है। सभी जीव व प्राणी अपने अपने तरीकों से अपने भाव व विचार व्यक्त करते हैं। लेकिन विचारप्रधान एवं विकासशील भाषा तो मनुष्य की विशेषता व देन है।
- भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि भाषा को बच्चा जन्म से ही सीख कर पैदा नहीं होता है। भाषा को बच्चा वातावरण से ही सीखता है। भाषा अपने आप प्राप्त नहीं होगी बल्कि उसे अर्जित करना पड़ेगा। बच्चा जिस परिवार, मौहल्ला, गांव या शहर में रहता है जहां उसका लालन पालन होता है उन्हीं के द्वारा अपने भावों को व्यक्त करने के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा बच्चा सीखता है। इस तरह भाषा को अर्जित किया जाता है यह कोई पैतृक संपत्ति नहीं है।
- भाषा सामाजिक जीवन का एक आधार है। विचारों व हाव भाव व्यक्त करने की इच्छा ही उसे दूसरे लोगों के सम्पर्क में लाती है। भाषा के बिना हम दैनिक कार्य नहीं कर सकते हैं। इसलिए मनुष्य के जीवन के लिए इसका महत्व बढ़ जाता है। बच्चा समाज में ही भाषा सीखता है व प्रयोग करता है, जिससे उसकी भाषा विकसित होती है। भाषा से सामाजिक व्यक्तिव का विकास होता है जिससे सामाजिक दक्षता भी बच्चों के अंदर पैदा होती है।
- परिवर्तन प्रकृति का नियम है जो कि भाषा पर भी लागू होता है। हम अपने पूर्वजों की भाषा को समझें और आज की भाषा को तो बहुत अंतर दिखाई देता है। भाषा का परिवर्तन मनुष्य के परिवर्तन को भी दिखाता है। मनुष्य के विचारों व सभ्यता तथा संस्कृति में भी परिवर्तन होता रहता है। आज सूचना व संप्रेषण के दौर में मीडिया की बढ़ती भूमिका ने हिंदी के स्वरूप को तेजी से बदला है। भाषा में परिवर्तन ध्वनियों, शब्दों, पदबंधों तथा वाक्य रचनाओं आदि के स्तर पर हो सकता है।

– बचपन से ही हम बहुत सारे शब्दों को अनुकरण से ही सीख जाते हैं चाहे हम उसका अर्थ भले ही न जानते हों। बच्चा सबसे पहले अपनी मां का अनुकरण करते हुए उसके हाव–भाव को समझता है। माता–पिता व परिवार, मित्रों का अनुकरण करते हुए बच्चा भाषा सीखता है। बच्चा प्रौढ़ों की अपेक्षा ज्यादा अनुकरण करता है। इसलिए भाषा शिक्षण के अध्यापक को अनुकरण की प्रक्रिया को समझना चाहिए जिससे वह कक्षागत शिक्षण में ध्यानपूर्वक शिक्षण करे क्योंकि बच्चे उसका अनुकरण करेंगे।
– भाषा का मूल रूप यानी मानक रूप होता है। भाषा में परिवर्तन होते रहते हैं लेकिन फिर भी उसके मानक रूप को बनाये रखना चाहिए नहीं तो भाषा में बहुत ज्यादा विकृतियां आ जायेंगी। भाषा तथा उसकी लिपि दोनों के ही मानक रूप का प्रयोग अपेक्षित है। भाषा शिक्षण के अध्यापक को भाषा के इस मानक रूप को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए।
– किसी भी भाषा के विकास को उसके साहित्य में प्रयुक्त शब्दों के माध्यम से समझ सकते हैं। किसी भी भाषा का इतिहास उस संस्कृति व सभ्यता का इतिहास होता हैं। कोई भी अकेला मनुष्य भाषा का विकास नहीं कर सकता है। इसलिए उसे सामाजिक संर्पकों में आना ही पड़ता है।

1.7 भाषा का महत्व

– भाषा मनुष्य के विकास की आधारशिला है। अब तक जो भी विकास हुआ है वह सब भाषा के माध्यम से ही हुआ है। भाषा मानव व समाज दोनों के विकास के लिए जरूरी है।
– भाषा मनुष्यों के बीच अपने विचारों व भावों को अभिव्यक्त करने का साधन है। जो कि स्थानीय स्तर पर ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में भाषा ही माध्यम है जिससे इंसान एक दूसरे की संस्कृति को समझता है।
– भाषा मनुष्य के इतिहास को संरक्षित रखती है और इसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाती है। आज (वर्तमान) कल (भविष्य) का आधार है जो कि भाषा के माध्यम से ही मुमकिन है।
– भाषा मानव के सामाजिक जीवन की बुनियाद है।
– भाषा ही मानव की पहचान है। भाषा के माध्यम से हम विभिन्न संस्कृतियों व सभ्यताओं को समझ सकते हैं। भाषा से मानव के प्राचीन व आधुनिक इतिहास को समझा जा सकता है।
– राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एकता व सद्‌भावना के लिए भाषा ही सबसे महत्वपूर्ण साधन है।
– मनुष्य को शिक्षित करने के लिए भाषा को ही माध्यम बनाया जाता है। ज्ञान विज्ञान का सबसे सर्वोत्तम ज़रिया भाषा ही है। इस तरह शिक्षा प्राप्त करने के लिए भाषा को ही आधार बनाया जाता है।

1.8 भाषा के विभिन्न रूप

1.8.1 मातृ भाषा (घर की भाषा)

बच्चा जब दुनिया में आता है तो सबसे पहले माँ के सम्पर्क में आता है। इस तरह बच्चा जिस भी भाषा को सुनना व प्रयोग करना सीखता है वह अपनी माँ से सीखता है। बच्चा अपने घर परिवार में ही सबसे पहले अपने भावों को अभिव्यक्त करना सीखता है। बच्चे का अपने घर के सदस्यों को हाव–भाव अभिव्यक्त करते देखने से उसकी अधिगम प्रक्रिया में 'भाषा को सीखना' शामिल हो जाता है। अपने घर आस पड़ोस व समुदाय में विचारों की अभिव्यक्ति को बच्चा सीखता है जो कि उसकी मातृभाषा के माध्यम से होता है। लेकिन भाषा वैज्ञानिक इसे बोली कहते हैं, मां और घर के आस पास के संपर्क से सीखी गई भाषा घर की बोली कही जाती है। यह समाज की भाषा नहीं होती है। उदाहरण के लिए हिंदी की अनेक बोलियां हैं जैसे– हरियाणवी, राजस्थानी, बुन्देली, खड़ी बोली, छत्तीसगढ़ी, ब्रज, अवधी आदि परन्तु इनमें खड़ी बोली को ही भाषा माना जाता है और यही हिंदी प्रदेश के लोगों की मातृभाषा मानी जाती है। बच्चा स्कूल आकर भाषा का शुद्ध रूप सीखता है। इस तरह मातृभाषा मां और घर के माहौल से सीखी गई भाषा का परिमार्जित रूप है जो कि समाजी मान्यता प्राप्त या स्वीकृत होती है। प्रो. रमन बिहारी लाल के मत में "भाषावैज्ञानिक कई समान बोलियों की प्रतिनिधि बोली को विभाषा और कई समान विभाषाओं की प्रतिनिधि विभाषा को भाषा कहते हैं। यही भाषा यथा क्षेत्रों के व्यक्तियों की मातृभाषा मानी जाती है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से भी मातृभाषा से तात्पर्य इसी भाषा से होता है"। बच्चे के जीवन की शुरूआत मातृभाषा से ही होती है जो कि उसके जीवन का आधार रखती है। जो आगे चलकर उसका भविष्य भी तय करती है। भारत विभिन्नताओं वाला देश है। यहाँ मातृभाषा के रूप में अनेक भाषाएं है जो कि भारत के विभिन्न राज्यों में शिक्षा का माध्यम है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, छत्तीसगढ़ व झारखंड में हिंदी को मातृभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। इन राज्यों के स्कूलों में भी शिक्षा का माध्यम हिंदी भाषा को ही रखा गया हैं।

1.8.2 स्कूल की भाषा

भारत एक बहुसांस्कृतिक देश है। हमारे देश में प्रत्येक राज्य की अपनी मातृभाषा है और वहां पर शिक्षा का माध्यम भी है। भारत की भाषिक बहुलता को देखते हुए यहां पर पूरे देश में एक ही भाषा को शिक्षा व प्रशासन की भाषा नहीं बनाया जा सकता था। आज अंतरराष्ट्रीय संदर्भ को देखते हुए वैश्विक स्तर पर अंग्रेजी भाषा का अपना महत्व है। भारतीय संविधान के अनुसार हिंदी को भारत की राजभाषा बनाया गया है। यदि हम हिंदी भाषी प्रांतों को देखें तो हिंदी वहां पर मातृभाषा एवं राजभाषा दोनों ही है। अहिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी को अन्य भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। अहिंदी भाषी प्रदेशों की राजभाषा भी हिंदी नहीं है। भारतीय संविधान के प्रावधानों में भी अंग्रेजी को सहराजभाषा का पद प्राप्त है। भारत की बहुभाषिक स्थिति को देखते हुए बच्चों के मानसिक स्तर के अनुसार त्रिभाषा सूत्र बनाया गया है, जिसके अनुसार बच्चों को विद्यालयी स्तर पर भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना है। त्रिभाषा सूत्र के अनुसार माध्यमिक स्तर

पर बालक को कम से कम तीन भाषाएं पढ़नी होंगी जो कि मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, अंग्रेजी भाषा, अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा की शिक्षा दी जाये। कोठारी आयोग ने भारत में भाषायी विविधता को देखते हुए त्रिभाषा सूत्र में बदलाव किया। आयोग ने भारत में अंग्रेजी भाषा के महत्व को स्वीकार करते हुए माध्यमिक स्तर पर तीन भाषाओं के शिक्षण को अनिवार्य बनाने का सुझाव दिया।

1 मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा की शिक्षा

2 केंद्र की राजभाषा हिंदी या सह राजभाषा अंग्रेजी

3 एक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा जो शिक्षा के माध्यम से अलग हो।

मातृभाषा का सीखना व प्रयोग करना बालक घर और आस–पास के माहौल से ही सीख लेता है। अपने हाव भाव को अभिव्यक्त करने लगता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि मातृभाषा को बच्चा स्वाभाविक रूप से सीखता है जबकि दूसरी अन्य भाषा को प्रयासों से सीखता है जो कि प्राकृतिक रूप से नहीं होता है। इस तरह मातृभाषा को सीखने में बच्चा सहजता व आसानी का अनुभव करता है। इसलिए स्कूल की भाषा मातृभाषा ही होनी चाहिए।

1.8.3 ज्ञान सृजन और भाषा

मनुष्य की भावाभिव्यक्ति व अपने अनुभवों को बांटने के लिए भाषा ही एक सबसे अहम माध्यम है। भाषा के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है। भाषा के द्वारा ही हम एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को अपने सकारात्मक व विकास के अनुभव बांटते है। भाषा की जानकारी व ज्ञान से ही हम दूसरे विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। किसी भी भाषा को अच्छी तरह पढ़ लिखकर हमें अपने विचारों को अभिव्यक्त करने व दूसरे के विचारों को ग्रहण करने में किसी भी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। भाषा के ज्ञान से मनुष्य की सृजनात्मक शक्ति भी बढ़ती है, उसमें मौलिकता भी आती है और वह अपने विचारों को बेहतर ढ़ग से प्रस्तुत कर सकता है। भाषा के माध्यम से व्याकरणिक स्वरूप, वाक्य रचना, वर्तनी व काव्य रचना का ज्ञान प्राप्त होता है। भाषा से विद्यार्थी दुनिया की मुख्य्य विशेषताओं से परिचित होकर इतिहास, सांस्कृतिक विरासत, राजनीतिक पहलू, वैज्ञानिक व आधुनिक सूचना व तकनीकि से परिचित हो सकते हैं। साहित्य जो कि इंसान के लिए मनोरंजनात्मक, ज्ञानात्मक, बोधात्मक व अनुभवी ज्ञान का सागर उपलब्ध कराता है। विद्यार्थी उपन्यास, बाल कहानियां, यात्रा वृत्तांत, नाटक, कविताओं को पढ़ कर दुनिया में ज्ञान को प्राप्त करके सृजनात्मकता की और अपना ध्यान लगाता है। विद्यार्थी लेखन कार्य सीखकर अपने विचारों को लेखात्मक स्वरूप दे सकते हैं। भाषा सीखकर मानव समाज के लिए सृजनात्मक कार्य तथा चिंतन करके शुभ कार्य की ओर अग्रसर होता है।

1.8.4 माध्यम भाषा

माध्यम भाषा विद्यालयी व शैक्षिक संस्थानों के लिए प्रयुक्त शब्द है जिस भाषा में हम शिक्षा पाते हैं वह माध्यम भाषा कहलाती है। बच्चों को कौन सी भाषा में शिक्षा दी जाए इस विषय पर बहुत सारे विद्वानों ने अपने विचार दिए है। महात्मा गांधी जी और गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का मत था कि बच्चे को मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए। मातृभाषा भावाभिव्यक्ति एवं विचारों के आदान–प्रदान का आसान माध्यम होती है। प्रायः सभी जगह मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाता है। इस तरह मातृभाषा अन्य भाषाओं के मुकाबले में ज्ञान–विज्ञान सीखने का आसान साधन होती है। इस तरह प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम व आधारशिला मातृभाषा ही होती है। भारत अंग्रेजों से आज़ाद हो गया है लेकिन आज भी अंग्रेजी से आज़ाद नहीं हो पाया है। भारत में आज भी अधिकतर निजी विद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाई होती है। मातृभाषा में पढ़ाई ज्यादातर सरकारी स्कूलों में होती है। इसलिए सभी मनोवैज्ञानिक तर्कों को छोड़कर भारत में अंग्रेजी भाषा को शिक्षा के माध्यम के तौर पर स्वीकार किया जाता है। जिसे समाज की भी अनौपचारिक मान्यता है। अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में पढ़ना सामाजिक हैसियत की तरह देखा जाता है जो कि बच्चे व परिवार को समाज में एक विशेष स्तर प्रदान करता है। लेकिन सत्य यह है कि मातृभाषा में ही विचार व चिंतन होता है। इसलिए विद्यालयी शिक्षा के किसी भी विषय का ज्ञान मातृभाषा के माध्यम से ही दिया जाना चाहिए। भारत में त्रिभाषा सूत्र की संकल्पना के माध्यम से शिक्षा के माध्यम को स्पष्ट करने की कोशिश की गई है।

1.8.5 विषय के रूप में भाषा और माध्यम भाषा में अंतर

विद्यालयी शिक्षा की पाठ्यचर्या में विभिन्न विषयों को पढ़ाया जाता है जैसे गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन आदि । भाषा के विषयों के रूप में जैसे हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, तमिल, मलयालम इत्यादि भाषाओं का अध्ययन कराया जाता है। जब सभी विषयों को पढ़ने के लिए किसी एक भाषा को माध्यम बनाया जाए तो वह हमारी शिक्षा प्राप्त करने की भाषा हो जाती है। भारत में त्रिभाषा सूत्र के संदर्भ में बच्चा माध्यमिक स्तर तक तीन भाषाओं का अध्ययन कर लेता है। माध्यम की भाषा को भी विद्यार्थी एक विषय के तौर पर पढ़ सकता है जैसे – हिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी को शिक्षा का माध्यम भी बनाया गया है और उसे विद्यालयी पाठ्यक्रम में एक विषय के तौर पर भी पढ़ाया जाता है। भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि विद्यालयों की पाठ्यचर्या में मातृभाषा को केंद्रीय स्थान दिया जाए। मातृभाषा को स्कूलों में केवल एक विषय के तौर पर ही न पढ़ाया जाए अपितु अन्य विषयों की शिक्षा भी उसी भाषा के माध्यम में दी जानी चाहिए।

1.8.6 बहुभाषिक कक्षा

यहां पर बहुभाषिक कक्षा से अभिप्राय है कि जब एक कक्षा में विभिन्न भाषाओं को बोलने वाले बच्चे पढ़ते हैं तो वह बहुभाषिक कक्षा कहलाती है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं शामिल है–1 असमिया 2 उड़िया 3 उर्दू 4 कन्नड़ 5 कश्मीरी 6 कोंकणी 7 गुजराती 8 डोंगरी 9 तमिल 10 तेलुगू 11 नेपाली 12 पंजाबी 13 बांग्ला 14 बोड़ो 15 मणिपुरी 16 मराठी 17

मलयालम 18 मैथिली 19 संथाली 20 संस्कृत 21 सिंधी 22 हिंदी। ज्यादातर शहरी क्षेत्रों में हमें बहुभाषिक कक्षाएं मिलती हैं। उदाहरण के तौर पर हैदराबाद एक मैट्रो शहर है इस कारण से भारत के विभिन्न राज्यों के लोग व्यवसाय व नौकरी के कारण यहां पर रहते हैं। हैदराबाद के विद्यालयों में हमें बहुभाषिक कक्षा देखने को मिल सकती है। यहां पर तेलुगू और उर्दू मातृभाषा है व हिंदी व अंग्रेजी जानने वाले भी बहुत लोग रहते हैं। तमिल, मलयालम, कन्नड़, उड़िया, मराठी बोलने वाले भी यहां रहते हैं। इस तरह के शहर में बहुभाषिक कक्षा का होना साधारण सी बात है। यहां पर तेलुगू, उर्दू व अंग्रेजी माध्यम के द्वारा स्कूलों में पढ़ाई होती है। हिंदी भाषा को भी हैदराबाद में द्वितीय व तृतीय भाषा के रूप में बहुत सारे विद्यालयों में पढ़ाया जाता है।

1.8.7 राजभाषा

हिंदी को राजभाषा का दर्जा स्वतंत्र भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर, 1949 ई. को दिया था। इसके लिए संविधान के भाग 17 में अनुच्छेद 343 से 351 तक प्रावधान किए गए हैं। राजभाषा संबंधी संवैधानिक और कानूनी व्यवस्थाओं का अनुपालन करने एवं संघ के सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए गृह मंत्रालय के एक स्वतंत्र विभाग के रूप में जून, 1975 में राजभाषा विभाग की स्थापना की गई थी। उसी समय से यह विभाग संघ के सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए प्रयास करता आ रहा है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में राजभाषा विभाग, गृहमंत्रालय के अधीन 8 क्षेत्रीय कार्यालय मुम्बई, भोपाल, दिल्ली, गाजियाबाद, कोलकाता, बेंगलूरू, गुवाहाटी, कोच्चि में कार्यरत हैं जो कि क्षेत्रीय आधार पर संघ सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन पर निगरानी रखते हैं।

राजभाषा विभाग केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए हिंदी शिक्षण योजना और पत्र –पत्रिकाओं और उससे संबंधित अन्य साहित्य का प्रकाशन तथा संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रयोग से संबंधित सभी मामलों के लिए केंद्रीय उत्तरदायित्व को पूरा करता है। संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रयोग से संबंधित सभी मामलों में समन्वय जिनमें प्रशासनिक शब्दावली, पाठ्य–विवरण, पाठ्य–पुस्तक, प्रशिक्षण पाठ्यक्रम भी शामिल है।

राजभाषा नियम 1963, 1976 यथा संशोधित, 1987, 2007 तथा 2011

- केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिंदी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।
- हिंदी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर केंद्रीय सरकार के कार्यालय में हिंदी में दिए जाएंगे
- कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिंदी या अंग्रेजी में कर सकता है।
- कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पणी या कार्यवृत्त हिंदी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करे।

राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए बनी समितियां – संसदीय राजभाषा समिति, केंद्रीय हिंदी समिति, हिंदी सलाहकार समिति, केंद्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नगर राजभाषा कार्यान्वयन

समितियां, विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समितियां, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान,केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो ।

1.9 संविधान और शिक्षा समितियों के रिपोर्ट में भाषा–भाषाओं की स्थिति

1.9.1 भारतीय संविधान के भाग 17 में धारा 343–351 तक भारत में भाषाओं संबंधी प्रावधान

343. संघ की राजभाषा.–(1) संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खंड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा। जिनके लिए उसका प्रयोग पहले किया जा रहा था:

परंतु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतरर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद् उक्त पंद्रह वर्ष की अवधि के पश्चात् विधि द्वारा–

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

344. राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद् की समिति.–(1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारंभ से पांच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात् ऐसे प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा, एक आयोग गठित करेगा जो एक अध्यक्ष और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा जिनको राष्ट्रपति नियुक्त करे और आदेश में आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित की जाएगी।

(2) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रपति को–

(क) संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग,

(ख) संघ के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बंधनों,

(ग) अनुच्छेद 348 में उल्लिखित सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप,

(ड़) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा और उनके प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित किए गए किसी अन्य विषय,

के बारे में सिफारिश करे।

(3) खंड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने में, आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का और लोक सेवाओं के संबंध में अहिंदी भाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा।

(4) एक समिति गठित की जाएगी जो तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी। जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे और दस राज्य सभा के सदस्य होंगे। जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(5) समिति का यह कर्तव्य होगा कि वह खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करे और राष्ट्रपति को उन पर अपनी राय के बारे में प्रतिवेदन दे।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति खंड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् उस संपूर्ण प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश दे सकेगा।

345. राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं.– अनुच्छेद 346 और अनुच्छेद 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान–मंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिंदी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगाः

परंतु जब तक राज्य का विधान–मंडल, विधि द्वारा, अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था।

346. एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा. – संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगीः

परंतु यदि दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिंदी भाषा होगी तो ऐसे पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

347. किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध.– यदि इस निमित्त मांग किए जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निर्देश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

348. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा.–(1) इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक–

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान–मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुनर्स्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद् या किसी राज्य के विधान–मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद् या किसी राज्य के विधान–मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगाः

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहाँ किसी राज्य के विधान–मंडल ने, उस विधान–मंडल में पुनर्स्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड के पैरा (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

349. भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया.– इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद 348 के खंड (1) में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद् के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुनर्स्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा और राष्ट्रपति किसी ऐसे विधेयक को पुनर्स्थापित या किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर और उस अनुच्छेद के खंड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही देगा, अन्यथा नहीं।

350. व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा.– प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

350–क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं– प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

350–ख. भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के लिए विशेष अधिकारी.–(1) भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के लिए उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करे और उन विषयों के संबंध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निदिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और संबंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

351. हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश.– संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द–भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

1.9.2 शिक्षा समितियों के रिपोर्ट में भाषा–भाषाओं की स्थिति

1.9.2.1 कोठारी कमीशन 1964–66

कोठारी कमीशन के अनुसार भाषाओं का अध्ययन संशोधित त्रिभाषा सूत्र के अनुसार होगा– (क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा (ख) संघ की राजभाषा या संघ की सहचारी भाषा (ग) ऐसी आधुनिक भारतीय या योरोपीय भाषा जो क और ख में सम्मिलित न हो और जो शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयुक्त न हो। अवर प्राथमिक अवस्था में दो भाषाएं – मातृभाषा या (प्रादेशिक भाषा) और संघ की राजभाषा या सहचारी भाषा पढ़ाई जायेगी। अवर माध्यमिक अवस्था में वह तीनों भाषाएं पढ़ाई जायेंगी। उच्चतर माध्यमिक अवस्था में केवल दो भाषाएं अनिवार्य होंगी। स्कूल और कॉलेज स्तर पर शिक्षा का माध्यम बनने के लिए मातृभाषा का सर्वप्रथम अधिकार है। अतः प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिए। प्रादेशिक भाषाओं में पुस्तकें और साहित्य, विशेष रूप से वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी, तैयार करने के लिए उत्साहपूर्ण कार्यवाही करनी चाहिए। शैक्षिक कार्य तथा बौद्धिक आदान–प्रदान के लिए उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी सम्पर्क भाषा का कार्य करेगी। हिंदी संघ की राजभाषा और लोगों की सम्पर्क भाषा है, इसलिए अहिंदी क्षेत्रों में उसे प्रसार के लिए सभी उपाय किये जाने चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 में कोठारी कमीशन की सिफारिशों के आधार पर भाषाओं के विकास का वर्णन किया है।

- प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में पहले से ही प्रयोग किया जा रहा है। विश्वविद्यालय के स्तर पर भी प्रादेशिक भाषाओं को माध्यम बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- माध्यमिक स्तर पर त्रिभाषा सूत्र को लागू करना चाहिए। हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी और अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा जो कि दक्षिण भारतीय भाषा को अपनाया जा सकता है। अहिंदी भाषी राज्यों में हिंदी और अंग्रेजी के साथ एक प्रादेशिक

भाषा पढ़ानी चाहिए। उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी और अंग्रेजी में उपयुक्त पाठ्यक्रम होने चाहिए जिससे विद्यार्थी इन भाषाओं में दक्षता हासिल कर सकें।

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार हिंदी के विकास के हर सम्भव प्रयास होने चाहिए। हिंदी को एक सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित किया जाना चाहिए ताकि हिंदी भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों के लिए अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।
- संस्कृत को विद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर पर पढ़ाने के लिए सुविधाओं को बढ़ाय जाना चाहिए।
- विश्व की अन्य भाषाओं व अंग्रेजी के अध्ययन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

1.9.2.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986

राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986 के 8.7 में कहा गया है कि 1968 की शिक्षा नीति में भाषाओं के विकास के प्रश्न पर विस्तृत रूप से विचार किया गया था। उस नीति की मूल सिफारिश में सुधार की गुंजाइश शायद ही हो और ये जितनी प्रासंगिक पहले थीं उतनी आज भी हैं। किंतु देश भर में 1968 की नीति का पालन एक समान नहीं हुआ। अब इस नीति का अधिक सक्रियता और सोद्देश्यता से लागू किया जाएगा।

1.9.2.3 कार्यक्रम का कार्यान्वयन 1992 (Programme of Action 1992)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की समीक्षा समिति की रिपोर्ट के बाद समीक्षा समिति की सिफारिशों को लागू करने के लिए POA 1992 बनाया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भाषाओं के संबंध में कहा गया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में भाषाओं के संबंध में किए गये प्रावधानों को ही सक्रियता के साथ लागू किया जायेगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की समीक्षा समिति ने किसी भी तरह का परिवर्तन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में नहीं किया है।

- वर्तमान में प्रावधान है कि विश्वविद्यालय स्तर पर किसी आधुनिक भारतीय भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाए लेकिन मातृभाषा के द्वारा शिक्षा को उपलब्ध कराना जरूरी है जो कि भारतीय संविधान में भाषाओं की दी गई सूची के आधार पर हो सकता है। भारतीय संविधान में अल्पसंख्यक वर्गो की भाषाओं के लिए भी प्रावधान की बात करता है। भारत में सैकड़ों मातृभाषाओं को ध्यान में रखकर शिक्षा का माध्यम बनाना पड़ेगा जिसके लिए पूर्वनियोजित सुविधाओं का होना जरूरी है।
- POA- 1992 में विस्तार से इस बात पर चर्चा हुई है कि विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा के माध्यम को लेकर सही स्थिति नहीं है। विद्यार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तकें व शिक्षण सामग्री सभी भाषाओं में उपलब्ध नहीं है। सभी भाषाओं में पढ़ाने के लिए अध्यापक भी नहीं हैं। इसलिए विभिन्न राज्य सरकारों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के साथ मिलकर अध्यापकों व विभिन्न भाषाओं में शिक्षण सामग्री तैयार करने का काम करना चाहिए। UGC को इस संदर्भ में व्यापक स्तर पर नियोजित तौर पर काम करना चाहिए।

- POA- 1992 के अनुसार त्रिभाषा सूत्र का कार्यान्वयन सही ढ़ग से नहीं हो पा रहा है। माध्यमिक स्तर पर सभी भाषाओं का अध्ययन नहीं हो पा रहा है। दक्षिण भारतीय भाषाओं का अध्ययन भी हिंदी भाषी प्रदेशों में न के बराबर है। तीनों भाषाओं के अध्ययन का कार्यकाल विभिन्न राज्यों में अलग अलग है।
- POA- 1992 के अनुसार अहिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी अध्यापकों की नियुक्ति को लगातार बनाये रखना चाहिए और सौ प्रतिशत हिंदी अध्यापकों की भर्ती की जानी चाहिए।
- हिंदी व अन्य मातृभाषाओं के अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए राज्यों को प्रबंध करना चाहिए। वर्तमान अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में सुधार करना चाहिए और उन्हें भाषा के प्रशिक्षण में दक्ष बनाना चाहिए।
- मंत्रालय व भाषा संस्थानों को भाषाओं के शिक्षण, भाषाओं के शिक्षण की पद्धति, भाषाओं को पढ़ानें में कम्प्यूटर व नई सूचना तकनीक पर शोध कार्य को बढ़ाना चाहिए।
- केंद्र को राज्यों को हिंदी अध्यापक नियुक्ति के लिए अनुदान सहायता देनी चाहिए।
- केंद्रीय हिंदी संस्थान, भारतीय भाषा अध्ययन संस्थान, अंग्रेजी व विदेशी भाषाओं का केंद्रीय संस्थान को राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद को साथ मिलकर यह तय करना है कि त्रिभाषा सूत्र के संदर्भ में किस स्तर तक भाषा की क्या दक्षता होनी चाहिए।
- भारतीय संविधान की धारा 351 ने संघ का कर्त्तव्य तय किया है कि वह हिंदी को एक संपर्क भाषा के तौर पर विकसित करे। हिंदी को एक संपर्क भाषा के रूप में विकसित करने के लिए हिंदी संस्थानों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है साथ ही गैर सरकारी संगठनों को सक्रियता के साथ इसमें शामिल करना चाहिए।
- केंद्रीय हिंदी संस्थान, भारतीय भाषा अध्ययन संस्थान, अंग्रेजी व विदेशी भाषाओं का केंद्रीय संस्थान और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद को हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में लागू करने के लिए एक दूसरे के साथ मिलकर काम करना चाहिए।
- शिक्षा विभाग संस्कृत भाषा और क्लासिकल भाषाओं के विकास और बढ़ावे के लिए विभिन्न कार्यक्रम चला रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर एक निकाय बनाया जाना चाहिए जो कि संस्कृत भाषा और क्लासिकल भाषाओं के अकादमिक मानक तय करें और राष्ट्रीय स्तर पर समन्वय का भी काम करें। राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान को सुदृढ़ कर उसका अन्य राज्यों में भी विस्तार किया जाना चाहिए। विद्यापीठ भी राज्यों में खोले जाने चाहिए।
- गैर सरकारी संगठनों के द्वारा अरबी और फारसी भाषाओं के विकास और बढ़ावे के लिए वित्तीय सहायता के साथ विशेष ध्यान देने की जरूरत है।
- उर्दू और सिंधी भाषा को बोलने वाले सभी राज्यों में लोग रहते हैं। इसलिए इन भाषाओं के विकास के लिए अलग से बोर्ड बनाने चाहिए। गुजराल समिति 1970 की सिफारिशों को इस संदर्भ में लागू करना चाहिए।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1.10.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 भारतीय संविधान में दिये गए भाषा संबंधी प्रावधानों का विस्तृत तौर पर विवेचन कीजिए।
2 भारतीय संविधान में हिंदी भाषा संबंधी दिये गये प्रावधानों की चर्चा कीजिए।
3 कोठारी कमीशन और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में विद्यालयी स्तर पर भाषाओं के अध्ययन संबंधी दी गई सिफारिशों पर विस्तृत रूप से रोशनी डालिए।
4 भाषा का अर्थ व परिभाषा बताते हुए उसके स्वरूप व महत्व पर रोशनी डालिए।
5 निम्नलिखित किन्ही तीन विषयों पर चर्चा कीजिए
(क) मातृ भाषा (ख) स्कूल की भाषा (ग) माध्यम भाषा

(घ) बहुभाषिक कक्षा (ड़) राजभाषा

1.10.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1 राजभाषा हिंदी की संवैधानिक स्थिति पर रोशनी डालिए ।
2 मातृभाषा और माध्यम भाषा में अंतर स्पष्ट कीजिए।
3 हिंदी राजभाषा पर एक नोट लिखिए ।
4 बहुभाषिक कक्षा में शिक्षक की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
5 कार्यक्रम का कार्यान्वयन (POA) 1992 में भाषाओं संबंधी सिफारिशों पर चर्चा कीजिए ।

1.11 संदर्भ

- लाल, रमन बिहारी, हिंदी शिक्षण, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ।
- नरूला, मधु, हिंदी शिक्षण, टवेंटी फर्स्ट सेंचुरी पब्लिकेशन्स, पटियाला।
- ईस्टर्न बुक कम्पनी (1997), *"भारत का संविधान"*, ईस्टर्न बुक कम्पनी, लखनऊ।

इकाई – 2 भाषायी दक्षताएं

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भाषायी दक्षताएं – सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना

2.4 सुनना (श्रवण)

2.4.1 सुनने के आवश्यक तत्व एवं आधार

2.4.2 श्रवण कौशल का विकास

2.5 श्रवण कौशलों के विकास में बोलने का लहजा, शैली एवं भाषाई विविधता व इसका प्रभाव

2.6 सुनने एवं बोलने के कौशल के स्रोत एवं सामग्री

2.7 पठन

2.7.1 पठन का अर्थ

2.7.2 पठन कौशल के विकास में बोध का महत्व

2.7.3 पठन की मुख्य विधियाँ

2.7.3.1 मुखर या सस्वर वाचन या पठन

2.7.3.2 सस्वर वाचन के गुण

2.7.3.3 वाचन (पठन) शिक्षण की विधियाँ

2.7.3.4 मौन पठन

2.7.3.4.1 मौन पठन के उद्देश्य

2.7.3.5 गहन पठन

2.7.3.6 विस्तृत पठन

2.7.3.7 आलोचनात्मक पठन

2.7.3.8 पढ़ने के कौशल के विकास में सृजनात्मक साहित्य

2.8 लेखन

2.8.1 लेखन का अर्थ, आवश्यक तत्व एवं आधार

2.8.2 लेखन कौशल का विकास

2.8.3 लेखन के चरण एवं प्रक्रिया

2.8.4 औपचारिक एवं अनौपचारिक लेखन

2.8.4.1 नियमबद्ध रचना

2.8.4.2 मुक्त रचना

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.9.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

2.9.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

2.10 संदर्भ

2.0 भाषायी दक्षताएं

2.1 प्रस्तावना

भाषा एक कला है, कौशल है। भाषा शिक्षण का अर्थ है बच्चों को भाषायी कौशलों–सुनने, बोलने,पढ़ने और लिखने में दक्ष करना। बालक मातृभाषा अनुकरण से स्वाभाविक रूप से सीख लेता है। विद्यालय में भाषा के सर्वमान्य रूप से परिचित कराया जाता है। भाषा के विकास क्रम में मानव समाज ने सर्वप्रथम अपने मनोवेगों, भावों और विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए अर्थपूर्ण ध्वनियों का विकास किया। इसके पश्चात् इन अर्थपूर्ण ध्वनियों को क्रम विशेष में प्रस्तुत करके वाक्य का रूप दिया। भाषा को लिखित रूप प्रदान करने के लिए मूल ध्वनियों का विश्लेषण करने के पश्चात् उनके लिए एक चिन्ह विशेष निश्चित किया गया। इन चिन्हों के समूह को 'भाषा लिपि' कहते है।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र –

- भाषायी दक्षताओं को परिभाषित कर सकेंगे।
- श्रवण कौशल का अभिप्राय, आवश्यक तत्व एवं आधारों की सूची बना सकेंगे।
- सुनने एवं बोलने में कौशल के लिए उपलब्ध सामग्री बता सकेंगे।
- पठन कौशल का अर्थ, विकास में बोध व शिक्षण विधियाँ का महत्व समझा सकेंगे।
- मौन एंव मुखर पठन के उद्देश्य, गुण व महत्व बता सकेंगे।
- गहन एवं विस्तृत पठन पर अनुच्छेद लिख पाएंगें।
- पढ़ने के कौशल के विकास में सृजनात्मक साहित्य की भूमिका बता सकेंगे।
- लेखन कौशल का अर्थ, तत्व एवं आधार बता पाएंगें।
- लेखन के चरण एवं प्रक्रिया बता सकेंगे।
- औपचारिक एवं अनौपचारिक लेखन में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

2.3 भाषायी दक्षताएं – सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना

भाषा प्रयोग में चार क्रियाएं (दक्षताएं) सम्मिलित है –भाषा को बोलना, सुनना, पढ़ना एवं लिखना। यदि इनका विश्लेषण किया जाये तो निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति भाषा शिक्षण के माध्यम से होनी चाहिए – (1) अन्य व्यक्तियों के कथन, भाषण आदि को सुनकर उसका अर्थ, आशय तथा भाव समझना। (2) अपने विचारों, भावों, उद्देश्यों को भाषा में बोलकर दूसरों के सामने प्रकट करना। (3) अन्य व्यक्तियों द्वारा लिखित भाषा को समझना। (4) अपने भावों, विचारों को लिपिबद्ध रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता पैदा करना। इन्हीं दक्षताओं के विकास हेतु सुनने, बोलने,

पढ़ने व लिखने के कौशलों का अभ्यास कराया जाता है जिससे छात्र इन क्रियाओं पर अधिकार प्राप्त कर सकें। बच्चों को बचपन में जो छोटी–छोटी कहानियाँ, बालगीत सुनाये जाते हैं वह वास्तव में बच्चों में सुनने के कौशल के विकास एवं दक्षता के लिए ही सुनाई जाती थी।

बोलने की शक्ति का विकास करने हेतु अध्यापक उनसे उनके घर के विषय में वार्तालाप करता है। जैसे कि उनके खिलौनों के बारे में, माता–पिता, भाई–बहन, पड़ोसियों एवं दोस्तों के बारे में जो वार्तालाप किया जाता है उससे न केवल श्रवण कौशल का विकास होता है बल्कि वाचन कौशल में भी बच्चा दक्ष हो जाता है।

पढ़ना–लिखना सिखाना विद्यालय का मुख्य कार्य माना जाता है। पढ़ना सार्थक क्रिया है। इसमें कई तरह के कौशल निहित होते हैं। अध्यापक पाठ्य–पुस्तक का शुद्ध एवं सस्वर वाचन कराता है। शब्दों का अर्थ एवं वाक्यों में प्रयोग बताता है। पढ़े हुए अंश पर प्रश्न करता है एवं उनके उत्तर देना सिखाता है। अनुच्छेदों का मौन पठन कर उनके विचारों को समझने की दक्षता पैदा करता है। इस तरह वह विद्यार्थी में श्रवण, वाचन एवं पठन कौशल का विकास करता है। हिन्दी भाषा में लिखने का कार्य देवनागरी लिपि के सभी वर्णों को शुद्ध लिखने से शुरू किया जाता है। उसके पश्चात् संयुक्ताक्षर एवं छोटे–छोटे वाक्यों को लिखने का अभ्यास कराया जाता है। सुलेख, आलेख, प्रतिलेख, श्रुतलेख आदि का अभ्यास भी उत्तरोत्तर क्रम में छात्रों से कराया जाता है। उसके पश्चात् छोटी–छोटी कहानियाँ लिखना, वर्णनात्मक लेख लिखना आदि बच्चों को सिखाया जाता है। इस समस्त अभ्यास का उद्देश्य बच्चों में भाषायी दक्षताएं पैदा करवाना होता है ताकि वह भाषायी कौशल में दक्षता प्राप्त कर सकें।

2.4 सुनना (श्रवण)

सामान्यतः कानों द्वारा ध्वनियों को ग्रहण करने और मस्तिष्क द्वारा उनको अनुभूत करने को सुनना अथवा श्रवण कहते हैं। परन्तु भाषा के सन्दर्भ में सुनने का अर्थ होता है – मौखिक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त भाव एवं विचारों को सुनकर समझना। इस प्रकार जब कोई व्यक्ति हमारे सामने अपने भाव एवं विचार मौखिक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और हम उसे सुनकर उसके भाव एवं विचार समझते और ग्रहण करते हैं तो हमारी यह क्रिया सुनना अथवा श्रवण कहलाती है। यह बात दूसरी है कि हम यथा भाव एवं विचार किस सीमा तक समझते और ग्रहण करते हैं।

2.4.1 सुनने के आवश्यक तत्व एवं आधार

मौखिक भाषा सुनने और सुनकर उसका अर्थ एवं भाव समझने के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है उन्हें ही सुनने के आवश्यक तत्व एवं आधार कहते हैं। ये तत्व निम्नलखित हैं :–

– श्रोता की श्रवणेन्द्रिय (कान)।

– श्रोता की भाषा की ध्वनियों, ध्वनि समूहों एवं शब्दों का ज्ञान।
– श्रोता में मूलध्वनियों एवं ध्वनि समूहों में अन्तर करने की योग्यता।
– श्रोता में सुनने की तत्परता, सुनने में उसकी रुचि एवं अवधान।
– श्रोता में धैर्यपूर्वक पूर्ण मनोयोग से सुनने की आदत।
– श्रोता में सुनी हुई सामग्री का अर्थ एवं भाव समझने की योग्यता।
– श्रोता में बोलने वालों के हाव–भाव के अनुसार अर्थ एवं भाव समझने की योग्यता।

2.4.2 श्रवण कौशल का विकास

बच्चों में सुनना (श्रवण) कौशल के विकास का अर्थ है उन्हें मौखिक भाषा सुनाकर उसके अर्थ एवं भाव समझने की क्रिया में निपुण करना। और इसके लिए आवश्यक है कि उनमें सुनने के आवश्यक तत्वों का विकास किया जाए। जहाँ तक मातृभाषा के सन्दर्भ में सुनने के कौशल के विकास का प्रश्न है, इसका कुछ विकास तो बच्चों में विद्यालयों में प्रवेश लेने से पहले हो चुका होता है परन्तु उसकी अपनी सीमा होती है और यह सीमा बहुत छोटी होती है। विद्यालयों में बच्चों को मातृभाषा के सर्वमान्य रूप को सुनने और सुनकर उसका अर्थ एवं भाव समझने में दक्ष किया जाता है। इसके लिए हमें विद्यालयी शिक्षा के भिन्न–भिन्न स्वरों पर भिन्न–भिन्न कार्य करने होते हैं।

2.5 श्रवण कौशलों के विकास में बोलने का लहजा, शैली एवं भाषाई विविधता व इसका प्रभाव

सुनकर ज्ञान प्राप्त करना एक मानवीय प्रवृत्ति है। श्रवणीय सामग्री का सुनकर अर्थ ग्रहण करना, भाषा सामग्री सुनाकर अर्थ ग्रहण कराना, भाषा–शिक्षण का पहला कौशलात्मक सामान्य उद्देश्य है। इस कौशल के विकास से छात्र में ऐसी मनःस्थिति का निर्माण किया जाता है कि वे कही हुई बात समझ सकें एवं वक्ता के कथन में प्रयुक्त शब्दों, उक्तियों, मुहावरों का प्रसंगानुकूल भाव समझ सकें। इसीलिए छात्रों को कथा शैलियों से परिचित कराना आवश्यक है। शब्दों और वाक्यों में सार्थकता उनका प्रथम लक्षण है। सार्थक ध्वनियाँ मस्तिष्क में विचार या भाव बिम्ब बनाती हैं और शिक्षक उन भाव या विचार बिम्बों को स्थूल रूप देता है। बोलने की शैली व लहजे से वक्ता के भाव एवं अभिवृत्ति प्रकट होती है। कई शब्दों में सिर्फ उस अर्थ का बोध नहीं होता है बल्कि उसके लाक्षणिक एवं व्यंजक अर्थ का भी बोध होता है, जैसे गाय का लाक्षणिक प्रयोग सीधे–सादे व्यक्ति के लिए किया जाता है। कुछ वाक्यों का व्यंग्यार्थ एवं हास्यार्थ अर्थ भिन्न होता है। अतः शिक्षक को इस कौशल में दक्ष करना आवश्यक है कि छात्र भाषा का प्रसंगानुकूल (शैली एवं लहजे के हिसाब से) बोध कर सकें क्योंकि मौखिक अभिव्यक्ति की भी विभिन्न शैलियाँ होती हैं। यदि वक्ता केवल 'अच्छा' कह रहा है तो 'अच्छा' व्यंगात्मक, हास्यात्मक, विस्मयात्मक एवं अनुमोदनात्मक आदि लहजे में कहा जा सकता है। यह श्रोता को समझना होगा कि ये 'अच्छा' किस भाव से कहा गया है। अतः शिक्षक को छात्र में अनुकूल शैली को समझने की योग्यता का विकास करना होता है। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसमें तुर्की, फारसी, अरबी,

अंग्रेजी तथा संस्कृत के शब्दों का समावेश है और यही गुण भाषा को जीवित रखता है। क्योंकि भाषा में लगातार विकास एवं नये शब्दों का समावेश आवश्यक है। इसके लिए छात्रों को भाषाई विविधता से परिचित कराना भी आवश्यक है।

2.6 सुनने एवं बोलने के कौशल के स्रोत एवं सामग्री

श्रवण एवं वाचन कौशल का विकास भाषा शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस कौशल के विकास के लिए शिक्षक नाना प्रकार के स्रोत एवं सामग्री का प्रयोग करता है जो निम्न है –

सस्वर वाचन : शिक्षक के द्वारा किये गये आदर्श वाचन और कक्षा के किसी छात्र द्वारा किये जाने वाले अनुकरण को ध्यानपूर्वक सुनकर शुद्ध उच्चारण, बलाघात, गति आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इससे शिक्षक को पता रहेगा कि छात्रों का श्रवण कौशल एवं पठन व वाचन कौशल कितना विकसित हो रहा है।

श्रुत लेख : इससे श्रवण–कौशल के प्रशिक्षण एवं विकास पर ध्यान दिया जा सकता है। श्रुत लेख शुद्ध लिखने के अभ्यास के लिए सर्वश्रेष्ठ साधन है। श्रुत–लेख के अन्तर्गत बालकों को सुनकर लिखना होता है। जो बालक ध्यानपूर्वक सुनेगा, वह समस्त सामग्री को सही और शुद्धता के साथ लिख सकेगा। लेकिन जो छात्र ध्यानपूर्वक सुनने का प्रयास नहीं करेगा, उसके लेख में शब्द या वाक्यों के छूटने का भय बना रहेगा। श्रुत–लेख सामग्री छात्रों के मानसिक और बौद्धिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।

भाषण : श्रवण का प्रशिक्षण देने हेतु भाषण का भी अभ्यास कराना लाभकारी होता है। छात्रों को पहले से यह बताना उचित होता है कि भाषण के बाद उनसे प्रश्न पूछे जायेंगे, तो सभी छात्र भाषण को ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

वाद–विवाद : श्रवण–कौशल का प्रशिक्षण देने हेतु वाद–विवाद क्रिया बहुत सार्थक और सशक्त होती है। इस क्रिया में भाग लेने वाले छात्रों को बहुत सचेत रहना पड़ता है। अगर वे ध्यान से नहीं सुनेंगे तो प्रतिपक्षी वक्ता के प्रश्नों का उत्तर देने में असफल रहेंगे। वाद–विवाद के समाप्त होने पर अन्य छात्रों से प्रश्न करने चाहिएं ताकि इस बात का पता लग सके कि कक्षा में कितने छात्र ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

विषय वस्तु पर आधारित प्रश्न : शिक्षक को छात्रों से पठित–सामग्री पर प्रश्न पूछने चाहिए। छात्रों के उत्तर से यह जाँच हो जायेगी कि छात्र सुनकर विषय–वस्तु को ग्रहण कर रहे हैं या नहीं। शिक्षक के द्वारा प्रश्न पूछे जाने से छात्र भी सावधान हो जायेंगे तथा कक्षा में शिक्षक की बात को ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

कहानी कहना तथा सुनना : सर्वप्रथम शिक्षक विद्यार्थियों को कहानी सुनाये तथा बाद में उनसे सुने। इससे भी ज्ञात हो जायेगा कि छात्रों ने कहानी ध्यानपूर्वक सुनी या नहीं। बालक कहानी

सुनकर अपार आनन्द लेते हैं। इसलिये विद्यार्थियों का ध्यान कहानी सुनने की ओर आकर्षित किया जा सकता है।

मल्टीमीडिया : ग्रामोफोन से कहानी, कविता, नाटक आदि सुनकर छात्र–छात्रों की साहित्यिक रुचि पैदा की जा सकती है। शुद्ध–उच्चारण की दृष्टि से इसकी सहायता ली जा सकती है। टेपरिकॉर्डर : टेपरिकॉर्डर के द्वारा किसी साहित्यिक कार्यक्रम को रिकॉर्ड करके जब चाहें छात्र–छात्राओं को सुनाया जा सकता है। चलचित्र (सिनेमा) में आवाज सुनाई देने के साथ–साथ दृश्य भी दिखाई देते हैं। नाटकों को विद्यार्थी ध्यान से देखने के साथ–साथ ध्यान से सुनते भी है। श्रवण–कौशल के विकास हेतु चलचित्र का प्रयोग करना लाभकारी सिद्ध होता है। जिस प्रकार किसी भी वार्ता आदि को टेप करके टेपरिकॉर्डर द्वारा विद्यार्थियों को सुनाया जा सकता है, उसी प्रकार किसी कार्यक्रम को रिकॉर्ड कर वीडियो के माध्यम से दूरदर्शन पर दिखाया जा सकता है। विद्वानों के भाषणों एवं विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों की कैसेट का प्रयोग किया जा सकता है। इससे श्रवण कौशल के साथ–साथ भाषण–कौशल को विकसित करने में भी सहायता मिलती है।

रोल प्ले : रोल प्ले के माध्यम से छात्रों का श्रवण एवं वाचन दोनों कौशलों का भलीभाँति विकास सम्भव हैं। इसमें किसी का रोल नियोजित ढंग से करने से पूर्व छात्र को एक चरित्र दिया जाता है। उस चरित्र के अनुसार छात्र उसका रोल करता है। उदाहरण स्वरूप रेल के टिकट खरीदने का, फोन पर एक मीटिंग करने का, किसी भी प्रकार का रोल प्ले करवाया जा सकता है।

परिस्थितियों के अनुसार संवाद : विभिन्न परिस्थितियों में किस प्रकार के भाव को प्रकट करना है एवं कैसे वाचन करना है, इसके लिए शिक्षक कृत्रिम रूप से ऐसी परिस्थितियाँ बनाने एवं उनके अनुसार छात्रों को संवाद बोलने के लिए प्रेरित करें। छात्र–छात्राओं को अपने दैनिक जीवन में अनेक प्रकार के अनुभव प्राप्त होते हैं। शिक्षक विद्यार्थियों को समय–समय पर उन अनुभवों की मौखिक व्याख्या करने के लिए अवसर प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त नाटक साहित्य की ऐसी सशक्त एवं सार्थक विद्या है, जिसके माध्यम से मौखिक अभिव्यक्ति के सभी गुणों का विकास होता है। इसमें भाग लेने वाले सभी छात्र–छात्राओं को पात्र के चरित्र के अनुसार उचित हाव–भाव, उतार–चढ़ाव एवं प्रवाह के साथ संवाद प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है। नाटक मंचन के द्वारा छात्र–छात्राएं मौखिक–अभिव्यक्ति की कई शैलियों को सीखते हैं।

भाषा लैब : भाषा लैब यंत्रों की सहायता से भाषा सिखाने का एक सक्रिय, स्वप्रयत्नपूर्ण, रोचक तथा उपयोगी आधुनिक शिक्षण अभिकरण है। भाषा लैब में छात्रों को अनुदेश पहले से रिकॉर्ड किये गये भाषण, व्याख्यान द्वारा दिये जाते हैं। छात्र शीर्ष ध्वनि यन्त्रों के माध्यम से भाषा में कहे गये शब्द एवं वाक्य सुनते है। पुनः थोड़ी देर के लिए रुका जाता है जिससे छात्र बोलने वाले के शब्दों एवं वाक्यों को दो या तीन बार दोहरा सकें। बाद में सुनाये गये, दिखाये पाठ पर आधारित प्रश्न किये जाते हैं। उस कविता का सौन्दर्य निरूपण करते हैं और इस प्रकार श्रवण एवं वाचन कौशल में दक्षता प्राप्त करते हैं।

मौलिक सामग्री : मौलिक सामग्री छोटे बच्चों के श्रवण एवं वाचन कौशल में बहुत सहायक होती है, जैसे कि कोई वस्तु दिखाकर उस पर आधारित प्रश्न कर सकते हैं। इन प्रश्नों के माध्यम से छात्रों के श्रवण कौशल एवं वाचन कौशल दोनों का विकास हो पायेगा। इसके अलावा छात्र मौलिक सामग्री देखकर आनन्दित भी होंगे। इसके अतिरिक्त मौलिक सामग्री के माध्यम से शिक्षक एक संप्रेषणात्मक वातावरण का निर्माण करता है जिसमें कि वह मौलिक सामग्री समस्त संप्रेषण का आधार बनती है।

2.7 पठन

2.7.1 पठन का अर्थ :

सामान्यतः लिखित भाषा को बाँचने की क्रिया को पढ़ना अथवा पठन कहा जाता है। जैसे – पम्फलेट पढ़ना, समाचार–पत्र पढ़ना और पुस्तकें पढ़ना। परन्तु भाषा–शिक्षण के सन्दर्भ में पढ़ने का अर्थ होता है किसी के द्वारा लिखित भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त भाव एवं विचारों को पढ़कर समझना। अर्थ बोध एवं भाव की प्रतीति पढ़ने के आवश्यक तत्व होते हैं। इस प्रकार जब हम किसी के द्वारा लिखे किसी लेख, कहानी, निबन्ध, नाटक अथवा पद्य को पढ़कर उसका अर्थ एवं भाव ग्रहण करते हैं तो हमारी इस क्रिया को पढ़ना अथवा पठन कहते हैं, यह बात दूसरी है कि हम उसका अर्थ एवं भाव किस सीमा तक समझते और ग्रहण करते हैं।

2.7.2 पठन कौशल के विकास में बोध का महत्व :

पठन कौशल के विकास में शिक्षक छात्रों को केवल अक्षर ज्ञान नहीं देता है बल्कि पाठ्य–सामग्री का बोध करना एक महत्वपूर्ण अंग है। बोध पढ़ने वाले को निष्क्रिय से सक्रिय बना देता है। बोध कर छात्र पाठय–सामग्री से अर्न्तक्रिया करता है। इसके अतिरिक्त इसका विकास, पठन कार्य प्रभावकारी होता है और छात्र आनन्द का अनुभव करता है। बोध करने से छात्र में नये संप्रत्ययों का निर्माण होता है। उसके शब्द–भण्डार में वृद्धि होती है। छात्र का तार्किक विकास होता है। नये ज्ञान को पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित करने की योग्यता का विकास होता है। पठन का अर्थ केवल लिपि ज्ञान नहीं है, बल्कि पढ़ना एवं संज्ञानपरक प्रक्रिया है अतः इसमें बोध अति आवश्यक है। बोध करते समय छात्र पाठ्य–सामग्री का तीन प्रकार से बोध करता है –

1. अक्षरशः बोध – लिखित सामग्री के साधारण तथ्यों का बोध करना।
2. मूल्यांकन बोध – लिखित सामग्री व पाठ्य–वस्तु का किन्ही आधारों पर मूल्यांकन कर एक निर्णय पर पहुँचना।
3. निष्कर्षीय बोध – तथ्यों के आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुँचना अर्थात पाठ्य–सामग्री को पढ़ने के पश्चात उनके आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुँचना।

2.7.3 पठन की मुख्य विधियाँ

2.7.3.1 मुखर या सस्वर वाचन या पठन

सस्वर वाचन से अभिप्राय है– स्वर के साथ पढ़ना। विद्यार्थी को सर्वप्रथम सस्वर वाचन की ही शिक्षा दी जाती है। विद्यार्थी जब आवाज करते हुए पाठ्य–सामग्री पढ़ते हैं तो इससे उन्हें आनन्द की प्राप्ति होती है। सस्वर वाचन अभ्यास शुद्ध उच्चारण की शिक्षा में सहायक होता है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि जो विद्यार्थी सस्वर वाचन में जितना निपुण होता है वह मौखिक अभिव्यक्ति में उतना ही कुशल होता है। सस्वर वाचन करते हुए विद्यार्थी को नये–नये शब्दों का ज्ञान होता है, शब्द–भंडार में वृद्धि होती है, नये–नये मुहावरे, लोकोक्तियों का ज्ञान होता है, ज्ञान में वृद्धि होती है और धीरे–धीरे स्वाध्याय की आदत का विकास होता है।

2.7.3.2 सस्वर वाचन के गुण :

शुद्ध उच्चारण : सस्वर वाचन वर्णों व शब्दों का उच्चारण शुद्ध करने में सहायक होता है। शिक्षक शब्दों में हर वर्ण का उच्चारण उचित स्थान पर करवाता है। उच्चारण की थोड़ी–सी अशुद्धि भी अर्थ का अनर्थ कर सकती है। जैसे गृह, गिरह, ग्रह। इसके अतिरिक्त उदाहरण रूप में समान, सामान और सम्मान।

उचित ध्वनि निर्गम : मुख से जो भी अवयव ध्वनि–निर्गम से सक्रिय होते हैं उनका सही प्रयोग करना शिक्षक सिखाता है। कंठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका आदि स्थानों से ध्वनि सही ढंग से किस प्रकार उच्चारित की जाती है, इसका ज्ञान भी सस्वर वाचन से हो जाता है।

उचित बल एवं विराम : पाठन सामग्री में जिस प्रकार के भाव–विचार हों, उसी प्रकार के बल का प्रयोग करना चाहिए। कहाँ कम रुकना चाहिए, कहाँ अधिक, कहाँ प्रश्न सूचक ध्वनि का प्रयोग करना है, कहाँ विस्मयजनक, इन सब बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। अर्द्ध विराम या पूर्ण विराम का अशुद्ध प्रयोग अर्थ को बदल देते हैं।

उचित लय एवं गति : पाठ्य सामग्री के भाव के अनुसार ही उचित लय, गति एवं प्रवाह का ध्यान रखते हुए वाचन करना चाहिए। ना तो गति तीव्र हो और न ही मन्द हो।

उचित हाव–भाव : सस्वर वाचन करते समय पाठ्य सामग्री के भावों के अनुसार पाठक को उचित हाव–भाव का प्रदर्शन करना चाहिए। श्रृंगार के भाव, क्रोध का भाव, वात्सल्य का भाव, वीरता के भाव आदि के अनुसार ही हाव–भाव परिवर्तित होने चाहिए।

उचित वाचन मुद्रा : सस्वर वाचन करते समय पाठक खड़े होकर या बैठकर जैसे भी पढ़ रहा हो, उसकी मुद्रा ठीक होनी चाहिये। पुस्तक आँख से एक फुट दूर होनी चाहिए। श्रोताओं के मध्य वाचन करते हुए बीच–बीच में उनकी तरफ देख लेना चाहिए।

स्वर माधुर्य : पठन करते समय वाणी में मधुरता होनी चाहिए। एक–एक स्वर स्पष्ट रूप से सुनाई दे व स्वर का उतार–चढ़ाव बना रहे, यही स्वर माधुर्य है।

प्रभावोत्पादकता : वाचन में प्रभाव लाने हेतु पाठक की दृष्टि परिधि व्यापक होनी चाहिए। उसकी दृष्टि केवल पुस्तक पर न होकर धारा प्रवाह गति के वाचन के ऊपर होनी चाहिए। ऐसा करने से वाचन में प्रभावोत्पदकता आ जाती है।

अंग संचालन : वाचन करते समय पाठक को अपने शारीरिक अंगों जैसे हाथ, पैर, सिर, आँख, भौंह आदि का स्वाभाविक रूप से अंग संचालन करना चाहिये। इससे वाचन में सजीवता आ जाती है। कविता–पाठ में तो कविता के भावों को स्पष्ट करके उसके प्रभाव और प्रवाह में चार चाँद लगा देता है।

स्वाभाविकता : पाठक को कृत्रिम स्वर में न बोलकर अपने स्वाभाविक ढंग से वाचन करना चाहिए।

2.7.3.3 वाचन (पठन) शिक्षण की विधियाँ

वाचन कौशल शिक्षण की शिक्षा विधिवत् होनी चाहिये। वाचन की शिक्षा देने हेतु निम्न विधियों को प्रयोग करना हितकर है –

अनुकरण विधि : यह विधि हिन्दी में विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। यह विधि अंग्रेजी विधियों का अनुकरण मात्र है, क्योंकि हिन्दी में प्रायः सभी वर्णों की ध्वनियां निश्चित हैं। यह विधि अंग्रेज़ी में अधिक लाभप्रद सिद्ध हो सकती है, क्योंकि उसमें वर्णों और शब्दों के उच्चारण बदलते हुए होते हैं।

भाषा शिक्षण–यन्त्र विधि : इस विधि में अनुकरण होता है। भाषा के शुद्ध उच्चारण वाले रिकॉर्डों को बजाया जाता है। विद्यार्थी उनका सही–सही अनुकरण करते हैं। यह विधि बहुत खर्चीली है और निर्धन देश इसका प्रयोग करने में असमर्थ हैं।

सामूहिक पठन विधि – यह भी विदेशी भाषा शिक्षण की पद्धतियों से उधार ली हुई पद्धति है। यह विधि बाल गीतों का वाचन कराने की दृष्टि से उचित है। इस विधि के अन्तर्गत विद्यार्थी शिक्षक के आदर्श पाठ का अनुकरण सामूहिक रूप से करते हैं। इस विधि से बालकों का स्वर सधता है और वाचन–संस्कार में मजबूती आती है।

देखो और कहो विधि : इस विधि के अन्तर्गत विद्यार्थियों को अक्षरों तथा ध्वनियों का ज्ञान कराने से पहले शब्दों का ज्ञान कराया जाता है। शब्दों का ज्ञान कराने हेतु उन्हें शब्दों से सम्बन्धित वस्तुएं दिखाई जाती है, लेकिन सभी वस्तुओं को दिखाना सम्भव नहीं होता, जिस वस्तु का चित्र होता है उसके नीचे उसका नाम लिखा होता है क्योंकि चित्र में दिखाई गई वस्तु विद्यार्थियों की जानी–पहचानी होती है इसलिये विद्यार्थी नीचे लिखे शब्द का उससे सम्बन्ध स्थापित कर लेते

हैं तो फिर शिक्षक उस शब्द का उच्चारण करता है और विद्यार्थी उसका अनुकरण करते हुए बोलते हैं। इसके बाद विश्लेषण द्वारा अक्षरों का उच्चारण करना सीख जाते हैं।

साहचर्य विधि : इस विधि की प्रतिपादक मान्टेसरी है। इस विधि के द्वारा खिलौनों, चित्रों, विभिन्न प्रत्यक्ष वस्तुओं और शब्दों में साहचर्य स्थापित किया जाता है। उदाहरणतः बालक को 'शेर' के चित्र के नीचे शेर लिखकर एक बार समझा दिया जाता है। समझने के पश्चात् फिर उनसे कहा जाता है कि वे ढूंढ़–ढूंढ़ कर नाम वाले कार्डों को सही चित्र या वस्तु के आगे लगाएं। यह विधि बालकों को बहुत रुचिकर लगती है।

ध्वनि–साम्य विधि : इस विधि के अनुसार समानोच्चारण वाले शब्दों को साथ–साथ सिखाया जाता है जैसे रमेश, सुरेश, महेश, दिनेश, उमेश आदि। इस विधि में यह दोष है कि ध्वनियों पर अधिक बल दिया जाता है न कि शब्दों के अर्थ पर। दूसरी बात यह है कि सीमित शब्दों को ही सिखाया जा सकता है।

शब्द–शिक्षण विधि : इस विधि के अनुसार सार्थक शब्दों के पढ़ने की शिक्षा दी जाती है जैसे मामा, पापा, चाचा, नाना आदि। इस विधि द्वारा विद्यार्थियों का मनोरंजन भी होता है इसलिये यह विधि मनोवैज्ञानिक है। इसमें विद्यार्थी रुचि लेते हैं। इसके पश्चात् वे धीरे–धीरे कठिन शब्दों को भी सीख लेते हैं। इस विधि के प्रयोग के लिये शिक्षक को कुशल होना चाहिए।

वर्ण–विन्यास विधि : यह बहुत पुरानी विधि है। इस विधि के अनुसार पहले स्वर फिर व्यंजन, मात्राएं, संयुक्ताक्षर और फिर सार्थक शब्द सिखाये जाते हैं। वर्तमान में स्कूलों में इसी विधि के द्वारा वाचन शिक्षा दी जाती है।

वाक्य–शिक्षण विधि : यह प्रणाली अक्षर–बोध प्रणाली के विपरीत है। अक्षर–बोध प्रणाली में पहले अक्षर–ज्ञान, फिर शब्द–ज्ञान और अन्त में वाक्य–ज्ञान कराया जाता है। परन्तु इस प्रणाली में पहले वाक्य–ज्ञान, फिर शब्द–ज्ञान और अन्त में अक्षर–ज्ञान कराया जाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार बालक पहले अपनी दृष्टि पूर्ण वाक्य पर ही डालता है। पृथक शब्दों पर उसका ध्यान बाद में जाता है। इसलिये इस प्रणाली में शिक्षण का क्रम है वाक्य– शब्द–वर्णाक्षर।

2.7.3.4 मौन–पठन

लिपिबद्ध–भाषा अर्थात् लिखित–सामग्री को बिना ध्वनित किए हुए मन ही मन में पढ़ने और साथ–साथ अर्थ ग्रहण करने की क्रिया 'मौन पठन' कहलाती है। मौन वाचन में नेत्र लिखित सामग्री को जल्दी–जल्दी पढ़ते हैं और मस्तिष्क उस सामग्री के अर्थ को ग्रहण करता जाता है। मौन–पाठ करते हुए पाठक के होंठ तक नहीं हिलते।

सस्वर वाचन की तरह मौन–वाचन के महत्व को हम निम्न प्रकार देख सकते हैं –

– मौन वाचन छात्र–छात्राओं की किसी लिखित सामग्री के विचारों की गहराई तक पहुँचने में सहायता करता है।
– यह छात्रों में चिन्तनशीलता का विकास करता है जिससे उसकी कल्पना शक्ति तो विकसित होती ही है, साथ ही साथ उनकी बुद्धि का भी विकास होता है।
– मौन वाचन में व्यक्तिगत क्षमता का महत्व होता है। कोई भी छात्र अपनी क्षमता के अनुसार पढ़ सकता है।
– एकान्त के क्षणों में रुचिकर लेख व पुस्तक को पढ़कर उसका आनन्द उठाया जा सकता है।
– इससे स्वाध्याय की आदत का विकास होता है।
– इसके माध्यम से द्रुत–वाचन (तीव्र गति से वाचन) करके विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है।

2.7.3.4.1 मौन–पठन के उद्देश्य

छात्र कम से कम समय में अधिक से अधिक सामग्री को आत्मसात करके समय का सदुपयोग कर सके।

वह लिखित सामग्री को पढ़कर समझ सके और अपनी कल्पना शक्ति का विकास कर सके।

छात्रों में चिन्तन एवं तर्क–वितर्क शक्ति का विकास करना।

छात्रों को तीव्र गति से पढ़ने का अभ्यास कराना।

परिचित शब्दावली को सक्रिय रूप देना।

पाठ्य सामग्री का अर्थ ग्रहण कर उसके केन्द्रीय भाव को समझने योग्य बनाना।

मौन वाचन में कुछ सहायक बातों का ध्यान रखना चाहिए जैसे कि मौन वाचन करते हुए आवाज बिल्कुल नहीं होनी चाहिए, अतः बिना होंठ हिलाये मन में पढ़ना चाहिये। पढ़ते हुए एकाग्रता होनी चाहिए। पाठक का चित्त एकाग्र होने पर ही पाठ्य वस्तु का अर्थ व भाव ग्रहण किया जा सकता है। शान्तिपूर्ण वातावरण, एकाग्रता, विस्तृत शब्दावली, व्याकरण के नियमों का ज्ञान, समुचित ज्ञान, तनाव रहित होना चाहिए। जिन बातों का उल्लेख किया गया है, उनकी कितनी ही पूर्णता क्यों न हो, कुशल शिक्षण के अभाव में वाचन–शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती। इसलिये मौन वाचन कराते समय शिक्षक को यह जानने का प्रयास करना चाहिये कि विद्यार्थी कहाँ तक किसी लिखित भाषा को समझने में सफल हुए हैं ? कभी–कभी विद्यार्थी पुस्तक के अक्षरों पर दृष्टि तो डालते रहते हैं परन्तु उनका ध्यान कहीं और होता है। शिक्षक को ऐसे विद्यार्थियों और उनकी समस्या को समझने का प्रयास करना चाहिये। उसे विद्यार्थियों

से बीच–बीच में प्रश्न पूछते रहना चाहिए ताकि छात्र–छात्राओं का ध्यान वाचन सामग्री की ओर रहे।

2.7.3.5 गहन पठन

गहन पठन मे छात्र पाठ्य वस्तु में भाषा पर अधिक ध्यान देता है। अर्थात् पठन में छात्र का नये शब्द, व्याकरण एवं लेखक के भाव एवं अभिव्यक्ति पर अधिक केन्द्रित रहता है। इस प्रकार के पठन से विद्यार्थी न केवल पाठ्य सामग्री का अक्षरशः अर्थ समझता है बल्कि उसमें निहितार्थ निष्कर्ष, सामाजिक सहसम्बन्ध इत्यादि का भी बोध करता है।

लॉंग एवं रिचडर्स ने गहन पठन को शिक्षक द्वारा करवाने वाली वह शिक्षण क्रिया माना है जिसमें शिक्षक पाठ्य–वस्तु का बोध शब्द–समूह एवं व्याकरणीय–बिन्दु एक अनुच्छेद के माध्यम से सिखा देता है।

गहन पठन की विशेषताएं –

- ये साधारणतः कक्षा केन्द्रित होती है।
- पाठक गहन रूप से पाठ्य वस्तु के भीतर तक चला जाता है, अर्थात् लेखक की अभिव्यक्ति में वास्तव में क्या अर्थ निहित है, यह जानने का प्रयास करता है।
- पाठक या छात्र का ध्यान भाषाई विवरण एवं अर्थ सम्बन्धी तत्वों पर केन्द्रित होता है।
- इसका मुख्य उद्देश्य केवल पठन कौशल का विकास न होकर भाषा ज्ञान होता है।
- छात्र नवीन शब्दों का अभिज्ञान कर पाता है।
- छोटे अनुच्छेद 500 शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए।
- शिक्षक द्वारा चयनित छात्रों के स्तर को ध्यान में रखते हैं।
- कठिनाई का स्तर छात्रों के अनुरूप होता है।
- शिक्षक द्वारा चयनित कौशलों के विकास के हेतु उपयुक्त शिक्षण सामग्री का चयन करना चाहिए।
- शब्दों का अभिज्ञान करते हुए भाव का बोध होना चाहिए।
- गहन पठन के लिए शिक्षक के द्वारा उपयुक्त पाठ्य वस्तु व क्रियाओं का चयन करना चाहिए।
- शिक्षक के द्वारा आवश्यक निर्देश दिए जाने चाहिए।
- ये पठन छात्रों को भाषा की संरचना, शब्द संग्रह, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का बोध करने के लिए आधार प्रदान करता है।
- भाषा पर एकाधिकार बढ़ाता है।
- वैयक्तिक छात्र के बोध का स्तर बढ़ाता है।

2.7.3.6 विस्तृत पठन

विस्तृत पठन अर्थात् मुक्त–पठन में छात्र अपने हिसाब से पुस्तक चुनने और उसको अपने स्वयं की शैली व अंदाज में पढ़ने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों को आनन्दित करना होता है। विस्तृत पठन के माध्यम से छात्र उन्मुक्त भाव से पठन करता है, फलस्वरूप उसके भाषा कौशल का विकास होता है। विस्तृत पठन में छात्र अपनी इच्छा से पुस्तक का चयन करते हैं। ये चयन छात्र की रुचि पर निर्भर करता है। पठन के पश्चात् किसी भी प्रकार की मन्त्रणा एवं चर्चा नहीं होती है न पाठ्य सामग्री पर आधारित कोई प्रश्न पूछे जाते हैं। बल्कि आनन्द की प्राप्ति के लिए छात्रों को पठन करने को प्रेरित किया जाता है।

ब्राउन के अनुसार ''पाठ्य वस्तु का सामान्य रूप से बोध करने के लिए विस्तृत पठन करवाया जाता है।''

लॉंग एवं रिचर्डस के अनुसार ''अपनी रुचि की पाठ्य वस्तु को व्यापक एवं विस्तृत रूप से जब छात्रों को पढ़ने के लिए दिया जाता है जो कि साधारणतया कक्षा में नहीं होता है और उसका केन्द्रीकरण पाठ के सार की ओर होता है।''

विस्तृत पठन का मुख्य उद्देश्य पाठक में रुचि एवं आत्मविश्वास को आत्मसात करना होता है। इसके अतिरिक्त मुख्य बिन्दुओं का बोध भी इसका उद्देश्य होता है।

विस्तृत पठन की विशेषताएं

– छात्र अपनी इच्छानुसार पठन करें।
– उपलब्ध पाठ्य वस्तु में विविधता होनी चाहिए।
– पठन का उद्देश्य आनन्द, सूचना प्राप्ति एवं सामान्य बोध हो।
– पठन की रफ्तार साधारणता तेज़ होती हैं।
– शिक्षक द्वारा सरल एवं प्रमाणिक पाठ्य सामग्री का चयन हो।
– सामान्य एवं स्तरानुरूप पाठ्य सामग्री का शिक्षक द्वारा चयन हो।
– शिक्षक द्वारा चयनित कहानी, लेख एवं आलेख होने चाहिए।
– छात्र की पठन योग्यता के अनुरूप होना चाहिए।
– पठन को वाचन के साथ जोड़ना चाहिए अर्थात् छात्र पठन के पश्चात् पढ़ी हुई सामग्री के बारे में एक दूसरे से वार्तालाप करें।
– पठन को लेखन के साथ जोड़ना चाहिए अर्थात् समाचार पढ़ने के पश्चात् छात्रों से एक रिपोर्ट तैयार करने को कहा जाये।
– यदि कक्षा में पुस्तकालय उपलब्ध है तो कक्षा के समय ही पुस्तक लेने व वापस करने का समय तय कर लेना चाहिए।

– पठन के पश्चात् भावों को व्यक्त करने का मौका मिलना चाहिए।
– छात्रों की रुचि के अनुरूप शिक्षक पाठ्य सामग्री को बता सकता है।
– शिक्षक को उपर्युक्त सामग्री के चयन के लिए निर्देश देने चाहिए।
– पाठ्य सामग्री में मौजूद प्रत्येक शब्द के अर्थ से छात्र के अपरिचित होने पर शिक्षक को अनदेखी नहीं करनी चाहिए।
– शिक्षक को पठन से पूर्व कुछ ऐसी क्रियाएं करनी चाहिए जिससे कि पठन में रुचि उत्पन्न हो।

विस्तृत पठन से छात्रों में पढ़ने की आदत का विकास, आत्मविश्वास का संचार होना, स्वायत्तता का अनुभव होना, शब्द भण्डार में वृद्धि, भाषायी क्षमताओं में सुधार और आगामी जीवन के लिए तैयारी होगी।

2.7.3.7 आलोचनात्मक पठन

आलोचनात्मक पठन से अभिप्राय है किसी विषय, वस्तु या पाठ्य वस्तु को उसके लक्ष्य, गुण–दोषों एवं उपयुक्तता की विवेचना करते हुए पठन करना। आलोचनात्मक पठन में पाठ्य सामग्री के साक्ष्य की जाँच करना, साक्ष्य पर प्रभाव डालने वाले तत्वों का ज्ञान करना, पाठ में मौजूद व्याख्या की विवेचना करना व तय करना कि लेखक के द्वारा दिये गये साक्ष्य, विचार एवं मत को पाठक को किस सीमा तक स्वीकृत करना है। व्यक्तिगत रुचि के आधार पर किसी कृति की निन्दा या प्रशंसा करना आलोचना का धर्म नहीं है। आलोचनात्मक पठन करते समय पाठक अपने व्यक्तिगत राग–द्वेष, रुचि–अरुचि से बचकर वस्तुनिष्ठ होकर साहित्य के प्रति न्याय करता है। आलोचनात्मक पठन में पाठक को यह ध्यान रखना होता है कि पाठ्य सामग्री की सैद्धान्तिक आलोचना कर रहा है या निर्णयात्मक या व्याख्यात्मक आलोचना।

2.7.3.8 पढ़ने के कौशल के विकास में सृजनात्मक साहित्य

भाषा एवं पढ़ने के कौशल के विकास में साहित्य एक महत्वपूर्ण साधन है। पढ़ने के कौशल के विकास में सृजनात्मक साहित्य एक माध्यम व साधन का कार्य करता है। बच्चों में विस्तृत पठन के विकास में कहानी की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। कहानी पढ़ने में बच्चा न केवल आनन्द का अनुभव करता है बल्कि स्वाभाविक रूप से भाषा का संप्रेषणात्मक रूप भी सीख लेता है। इसके अतिरिक्त शब्द भण्डार में वृद्धि होती है। मुहावरे एवं लोकोक्ति भाषा का अलंकरण हैं। कहानी के माध्यम से छात्र उपयुक्त मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग करना भी सीख जाता है। पढ़ने का कौशल, लिखने के कौशल में एक आधार का भी कार्य करता है। सृजनात्मक साहित्य के माध्यम से बालक भाषा के व्याकरणीय रूप से भलीभाँति परिचित हो जाता है। उसका शब्दकोश विस्तृत एवं सक्रिय हो जाता है। सृजनात्मक अभिव्यक्ति सामान्य रूप की अभिव्यक्ति न होकर विशिष्ट अभिव्यक्ति है जिससे पाठक की सौन्दर्यप्रियता की भावना को दृष्टि मिलती है।

2.8 लेखन

2.8.1 लेखन का अर्थ व आवश्यक तत्व एवं आधार

सामान्यतः भाषा के माध्यम से कुछ भी लिखना लेखन कहलाता है। परन्तु भाषा शिक्षण के सन्दर्भ में लेखन का अर्थ है – अर्थपूर्ण लेखन, भाव एवं विचारों की लिखित रूप में अभिव्यक्ति। भाव एवं विचार लेखन के मूल तत्व होते हैं। इस प्रकार अपने भाव एवं विचारों को लिखित भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करने की क्रिया को लेखन कहते हैं। यह बात दूसरी है कि लेखक अपने भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति किस सीमा तक कर पाता है। लिखित भाषा के माध्यम से भाव एवं विचार अभिव्यक्त करने के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है उन्हें ही लेखन के आवश्यक तत्व एवं आधार कहते हैं। ये तत्व निम्नलिखित हैं :–

लेखक का लेखन तन्त्र – हाथ, आँख आदि एवं लेखन सामग्री पैन, कॉपी आदि।

लेखक का लिपि ज्ञान, उनको उनके सही रूप में लिखने का अभ्यास।

लेखक का अपना सक्रिय शब्द कोश, शब्दों का शुद्ध उच्चारण, शुद्ध वर्तनी, अपने भाव एवं विचारों की स्पष्टता।

लेखक में लिखने की तत्परता, लेखन में उसकी रुचि एवं अध्ययन।

लेखक का अपने भाव एवं विचारों को धैर्य के साथ, पूर्ण मनोयोग से तार्किक क्रम में अभिव्यक्त करने का अभ्यास।

लेखक का प्रसंगानुकूल भाषा–ज्ञान एवं उसके प्रयोग का अभ्यास।

लेखक का विराम चिन्हों के प्रयोग का ज्ञान एवं अभ्यास।

2.8.2 लेखन कौशल का विकास

बच्चों में लेखन कौशल के विकास का अर्थ है उन्हें अपने भाव एवं विचारों को लिखित भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करने की क्रिया में निपुण करना और इसके लिए आवश्यक है कि उनमें लेखन के आवश्यक तत्वों का विकास किया जाए। अतः इसके लिए तो सतत् प्रयास की आवश्यकता होती है। किसी भी कौशल के विकास के लिए सबसे अधिक आवश्यकता अभ्यास की होती है। हम बच्चों को लिखने के जितने अधिक अवसर देंगे, वे लेखन कौशल में उतने ही अधिक निपुण होंगे।

2.8.3 लेखन के चरण एवं प्रक्रिया

सुलेख : लेखन कौशल का विकास करते समय शिक्षक अक्षर को लिखना सिखाने से प्रारम्भ करता है। इसके लिए शिक्षक, प्रतिलेख, श्रुतलेख एवं सुलेख का प्रयोग करता है। सुलेख के समय निम्न बातें ध्यान रखता है – पूर्ण, सुन्दर और सुडौल अक्षर लिखना, शिरोरेखा, स्वच्छ लेखन, पृष्ठ पर लिखित अंश का स्थान अर्थात् ऊपर, नीचे एवं बायीं ओर हाशियां छोड़ने का ध्यान, अक्षर–अक्षर, शब्द–शब्द और वाक्य–वाक्य के बीच दूरी का ध्यान।

भाषा सम्बन्धी विविध अभ्यास : शुद्ध भाषा के प्रयोग पर ही लिखित रचना की प्रभावपूर्णता निर्भर है, अतः अधिकाधिक भाषा सम्बन्धी अभ्यास छात्रों द्वारा होने चाहिए। इन अभ्यासों के लिए एक निश्चित योजना बना लेनी चाहिए। कक्षा में लिखित अभ्यास के लिए मौखिक कार्य की भी सहायता लेना अनिवार्य है। श्यामपट्ट का अधिकाधिक प्रयोग भी वांछित है। भाषा सम्बन्धी अभ्यासों में निम्नांकित भाषिक अवयवों के अभ्यास पर बल देने की आवश्यकता है –

वर्तनी सम्बन्धी अभ्यास – लेखन कौशल के विकास के लिए वर्तनी सम्बन्धी अभ्यास के लिए छात्रों को लिपि का सही ज्ञान, उच्चारण की शुद्धता, व्याकरणिक रूपों की जानकारी अति आवश्यक है।

शब्द प्रयोग सम्बन्धी अभ्यास : भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति के साधन शब्द ही हैं। रचना की उत्कृष्टता बहुत कुछ शब्दों के ही ज्ञान, प्रयोग तथा योजना पर निर्भर है। रचना के अन्तर्गत शिक्षण का उद्देश्य बालक के शब्द भण्डार की अभिवृद्धि और उनका यथास्थान उचित प्रयोग करने की शिक्षा प्रदान करना भी है। शब्दों का वाक्यों में प्रयोग, रिक्त स्थानों की पूर्ति, समानार्थी, एकार्थक शब्दों का अभ्यास, लिंग, वचन एवं विभक्ति सम्बन्धी अभ्यास, उपयुक्त विशेषण, सर्वनाम तथा क्रिया विशेषणों का प्रयोग, उपसर्ग, प्रत्यय और समास सम्बन्धी शब्द–रचना के विविध अभ्यास आवश्यक है।

वाक्य रचना सम्बन्धी ज्ञान : भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से वाक्य–रचना के अभ्यासों का विशेष महत्व है। ज्ञात विषयों पर प्रश्नों के उत्तर लिखवाना, उत्तर देकर उन पर प्रश्नों की रचना कराना, वाक्य के विविध रूपों का अभ्यास, एक रूप से दूसरे रूप में वाक्य परिवर्तन, वाक्य का प्रारम्भिक अंश देकर शेष की पूर्ति, काल परिवर्तन किया जा सकता है।

अनुच्छेद–रचना : भावों एवं विचारों को सुश्रृंखलित एवं सुसम्बद्ध रूप से प्रस्तुत करने के लिए अनेक वाक्यों को क्रम से आयोजित करना पड़ता है। ऐसे वाक्यों के समूह को 'अनुच्छेद' कहते हैं। प्रत्येक अनुच्छेद में एक मुख्य विचार रहता है। अपने विचारों को सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के लिए विद्यार्थियों को अनुच्छेद–रचना का ज्ञान अवश्य करा देना चाहिए। पाठ्य पुस्तक पढ़ाते समय विभिन्न अनुच्छेदों की ओर छात्रों का ध्यान आकृष्ट किया जा सकता है और प्रत्येक बिन्दु पर एक–एक अनुच्छेद लिखने के लिए कहा जा सकता है।

2.8.4 औपचारिक एवं अनौपचारिक लेखन

अनौपचारिक लेखन वक्ता के वार्तालाप के समरूप होता है। अनौपचारिक लेखन में व्यक्तिगत शैली की झलक मिलती है और ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे पाठक से लेखक सीधा वार्तालाप कर रहा है। इसके अतिरिक्त इसमें वाक्य संक्षिप्त होते हैं और कहीं–कहीं अपूर्ण वाक्यों का भी प्रयोग हो जाता है। औपचारिक लेखन में मुख्य बिन्दुओं को उठाया जाता है उसकी व्याख्या करने के पश्चात् निष्कर्ष की ओर अग्रसर होते हैं। अनौपचारिक लेखन में भाव पक्ष का अभाव होता है। इसमें किसी वाक्य को अपूर्ण नहीं छोड़ा जाता है।

2.8.4.1 नियमबद्ध रचना : नियमबद्ध रचना में प्रतिबंध स्वरूप अनेक नियम हैं जिनका पालन आवश्यक है। लेखन उन नियमों से आबद्ध रहता है। ये नियम भी दो प्रकार के हैं – 1) भाषा सम्बन्धी जैसे शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, विराम चिन्ह आदि जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है और 2) ऐसे विषय जिनमें सुनिश्चित प्रणाली एवं क्रिया विधि का अनुसरण करना पड़ता है, जैसे, पत्र–प्रपत्र। रचना सम्बन्धी विषयों का शिक्षण माध्यमिक कक्षाओं में आवश्यक है। छात्रों को इनके लिखने की प्रणाली एवं क्रियाविधि का परिचय विविध उदाहरणों एवं नमूनों द्वारा करा देना चाहिए और फिर उनके आधार पर प्रचुर अभ्यास कराना चाहिए।

2.8.4.2 मुक्त रचना – इस प्रकार की रचना में भाषा सम्बन्धी नियमों का पालन करते हुए भावाव्यक्ति की दृष्टि से स्वेच्छानुसार शब्दों को चुनकर, सँवार कर तथा सजा कर संयोजित करने की स्वतन्त्रता लेखक को प्राप्त रहती है। उपर्युक्त पत्र–प्रपत्रों की भाँति प्रतिबंध एवं नियमों से वह बँधा नहीं रहता। इस प्रकार की रचना का उद्देष्य ''अपने विचारों को अपनी शैली में क्रमबद्ध एवं सुसज्जित करने, अपने मौलिक विचारों की अभिव्यक्ति के लिए मनोनुकूल शब्द–चयन की योग्यता एवं सामर्थ्य प्रदान करना है।''

मुक्त रचना की दृष्टि से अनेक प्रकार के विषय चुने जा सकते हैं, किन्तु प्रारम्भ में ही विद्यार्थी से स्वतन्त्र मौलिक रचनाओं की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अत उन्हें पहले सरल, ज्ञात, पठित एवं स्थूल विषयों पर कुछ स्वतन्त्रता के साथ लिखने के लिए कहना चाहिए, जैसे, पठित अंशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर, पाठों के सारांश। पठित महापुरुषों की जीवनी। चर्चित विषयों पर रचना सम्बन्धी अभ्यास हो जाने पर विद्यार्थियों को ऐसे विषयों पर लिखने के अभ्यास देने चाहिए जिनमें उन्हें स्वतन्त्र भाव का अवसर मिले, कल्पना एवं तर्क शक्ति का प्रयोग करना पड़े और वे अपनी शैली का विकास कर सकें। आगे लिखित रचना के विविध रूपों में ऐसे विषयों का उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त संवाद, व्याख्या, सार लेखन, विचार विस्तार, नोट बनाना इत्यादि भी लिखवाये जा सकते हैं।

पत्र–प्रपत्र : पत्र एवं प्रपत्र सम्बन्धी शिक्षण माध्यमिक स्तर से प्रारम्भ हो जाना चाहिए। प्रारम्भ में अति सामान्य रूप के ही होंगे, जैसे, माता–पिता को पत्र, कुशल–क्षेम सम्बन्धी, अपनी आवश्यकता के लिए जैसे रुपये मँगाने के लिए पिता को पत्र, प्रधानाध्यापक को आवेदन–पत्र, मित्रों को पत्र ये पत्र छोटे आकार के ही होंगे। लगभग 10–12 पंक्तियाँ यथेष्ट हैं। उसके पश्चात् पत्रों का रूप और आकार कुछ उच्च स्तर का हो जाता है। इस स्तर पर निम्नांकित प्रकार के पत्र

लिखवाए जा सकते हैं – पारिवारिक पत्र, प्रार्थनापत्र, प्राध्यापक के नाम विभिन्न आवेदन पत्र। इसके अतिरिक्त छात्र सभी प्रकार के वैयक्तिक, सामाजिक एवं व्यावहारिक पत्र लिख सकते हैं। सामान्यत उनके पत्रों की शैली वर्णनात्मक ही होती है, पर इस स्तर पर भावात्मकता का भी समावेश होने लगता है।

वर्णन : छात्र स्वयं देखे हुए स्थानों का वर्णन बड़ी रुचि एवं सजीवता से करते हैं। प्रारम्भ में उन्हें ऐसे स्थानों, दृश्यों, घटनाओं एवं क्रिया–कलापों का वर्णन देना चाहिए जिनका उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव हो चुका हो, जैसे, अपना गाँव, अपना नगर, अपना विद्यालय, गाँव या नगर में घटने वाली कोई विशिष्ट घटना, विद्यालय में होने वाले समारोह, खेल–प्रतियोगिताएँ, यात्रा, तीर्थ स्थान, उत्सव, मेला, प्रदर्शनी, चिड़ियाघर आदि।

संवाद : माध्यमिक स्तर पर कुछ प्रतिभाशाली छात्र स्वानुभव के आधार पर सरल संवाद लिख लेते हैं। अतः इस प्रकार के अभ्यास भी देने चाहिए। गाँव और शहर, लोहा और कोयला जैसे विषयों पर विद्यार्थी संवादात्मक पाठ लिख सकते हैं। पठित कहानियों को भी संवाद रूप में लिखने का अभ्यास देना चाहिए, जैसे – खरगोश और कछुआ, बादल और सूरज।

जीवनी तथा आत्मकथा : महापुरुषों की जीवनी पढ़कर अपनी भाषा में उसे लिखना, लिखित रचना की दृष्टि से अच्छा अभ्यास है। आदर्श महापुरूषों की जीवनी लिखना उनके लिए स्वयं ही प्रेरणादायी विषय सिद्ध होता है। आत्मकथा लिखने की शैली से भी विद्यार्थी इस स्तर पर परिचित होने लगते हैं। रोचक वस्तुओं का वर्णन आत्मकथा शैली में लिखने के लिए कहा जा सकता है, जैसे, कोयले की आत्म कहानी, कपास की आत्म कहानी आदि।

व्याख्या : माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी पाठ्य पुस्तकों के महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या लिखने लगते हैं, और इनमें यह क्षमता और भी विकसित हो जाती है। अब विद्यार्थियों को अवतरित अंश के भाव एवं भाषा–सौंदर्य के विश्लेषण की दिशा में भी अग्रसर किया जा सकता है।

सार लेखन एवं विचार–विस्तार : माध्यमिक स्तर पर छात्रों में किसी पठित सामग्री का संक्षिप्त रूप या सारांश प्रस्तुत करने की क्षमता आ जानी चाहिए। सार ग्रहण में पाठान्तर्गत तथ्यों, भावों, विचारों की उपेक्षा न करके उनकी संक्षिप्त अभिव्यक्ति पर बल देना चाहिए, यह बात छात्रों को स्पष्ट कर देनी चाहिए। सार लेखन की ही भाँति विचार–विस्तार सम्बन्धी अभ्यास भी छात्रों को देने चाहिए। सारगर्भित कथन या सूत्र देकर उनका स्पष्टीकरण पूछना चाहिए। संक्षिप्त कथन देकर उनकी व्याख्या भी पूछी जा सकती है।

रिपोर्ट लिखना : विद्यालयों में होने वाले समारोहों एवं विविध क्रिया–कलापों की रिपोर्ट लिखना भी विद्यार्थियों को सिखाना चाहिए। रिपोर्ट लिखने में किन–किन बातों का उल्लेख आवश्यक है, यह छात्रों को बता देना चाहिए, जैसे, किसी वाद–विवाद प्रतियोगिता की रिपोर्ट लिखनी है तो यह बातें आवश्यक हैं – किसी संस्था या परिषद के तत्वाधान में यह आयोजन हुआ है उसका उल्लेख, तिथि, समय, अध्यक्ष का नाम, पक्ष–विपक्ष के वक्ताओं के नाम, भाषणों के कुछ रोचक

प्रसंग, निर्णायकों के निर्णय, अध्यक्षीय भाषण, धन्यवाद–ज्ञापन आदि। इसी प्रकार अन्य कार्यों की रिपोर्ट भी लिखाई जा सकती है।

नोट लेना और नोट बनाना : माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में छात्रों को यह सिखाना चाहिए कि वे किस प्रकार किसी भाषण या व्याख्यान का नोट लें। नोट लेने में यह सावधानी आवश्यक है कि कोई मुख्य बिन्दु छूट न जाये। नोट लेने के अभ्यास से शीर्घ एवं तीव्रगति से लिखने का भी अभ्यास बढ़ता है, सुनने की एकाग्रता बनी रहती है और सार ग्रहण की क्षमता का भी विकास होता है।

संपादकीय : माध्यमिक स्तर पर प्रतिभा–सम्पन्न छात्र पत्र–पत्रिकाओं के लिए संपादकीय लिखने का अभ्यास कर सकते हैं। विद्यालय की पत्रिका के लिए संपादकीय लिखने में उनकी रुचि जागृत की जा सकती है। शिक्षक उनके संपादकीय में सुधार कर सकता है। किस प्रकार संपादकीय लिखना चाहिए और उसमें किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए, इसका आदर्श भी शिक्षक द्वारा प्रस्तुत होना चाहिए। संपादकीय के लिए एक निष्पक्ष एवं संतुलित दृष्टिकोण छात्रों में उत्पन्न करना आवश्यक है।

पुस्तक समीक्षा : माध्यमिक स्तर पर छात्रों को पुस्तक–समीक्षा लिखने के अभ्यास भी दिए जा सकते हैं। पत्र–पत्रिकाएँ एवं पुस्तकें पढ़कर उनके विषय में अपने विचारों को व्यक्त करना इस अभ्यास का उद्देश्य है। शिक्षक छात्रों की यथावश्यक सहायता करेगा, दूसरे समालोचकों के विचार बताएगा और विद्यार्थियों को स्वतन्त्र रूप से विचार व्यक्त करने के लिए कहेगा। वह समीक्षा की दृष्टि से कुछ संकेत या प्रारूप भी दे सकता है, जैसे, पुस्तक का परिचय, विषय, विविध प्रकरण एवं उनके मुख्य विचार, लेखक का आशय, भाषा एवं शैली, अपनी प्रतिक्रिया कारण सहित आदि।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति सम्बन्धी रचनाएं : मुक्त या स्वतंत्र रचना का वास्तविक रूप सृजनात्मक रचनाओं में ही देखने को मिलता है। इन रचनाओं में सृजनात्मक अभिव्यक्ति का विशेष महत्व है और इनमें कलात्मकता, मौलिकता, लालित्य एवं अनुरंजकता विशेष रूप से अपेक्षित है। सृजनात्मक अभिव्यक्ति सामान्य रूप की अभिव्यक्ति न होकर विशिष्ट अभिव्यक्ति है, जिससे पाठक की सौन्दर्यप्रियता की भावना को दृष्टि मिलती है। रचनाकार का व्यक्तित्व इन रचनाओं में झलकता है, उसकी मनोगत धारणाएँ एवं प्रतिक्रियाएँ अभिव्यंजित होती हैं और वह अपनी कल्पना एवं प्रतिभा के योग से एक नूतन सृष्टि करता है।

निबंध लिखना गद्य साहित्य की एक प्रमुख विधा होने के कारण निबन्ध लेखन का लिखित रचना की दृष्टि से विशेष महत्व है। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को सरल एवं रोचक विषयों पर निबन्ध लिखने के लिए उचित निर्देशन देने चाहिए। दीपावली, होली, ईद, क्रिसमस आदि पर्व, विभिन्न ऋतुएँ – जाड़े की रात, जेठ की दुपहरी, घनघोर वर्षा का दिन, पतझड़, बसंत, अपनी रुचि के खेल–कूद आदि विषयों पर इस स्तर के विद्यार्थी अच्छी तरह निबन्ध लिख लेते हैं। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अनेक प्रकार के निबन्ध लिखाए जा सकते हैं, जैसे – वर्णनात्मक, विवरणात्मक, सूचनात्मक,तुलनात्मक, संस्मरणात्मक, कल्पनापूर्ण विषय, विचारात्मक निबंध, भावात्मक निबंध, कहानी।

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.9.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 भाषायी कौशलों का उल्लेख कीजिए और यह बताइए कि आप बच्चों में श्रवण कौशल का विकास कैसे करेंगे?

2 पठन से आप क्या समझते है ? मातृभाषा शिक्षण में मौखिक पठन और मौन पठन के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

3 सुनने एवं बोलने के कौशल के स्रोत एवं सामग्री की विस्तृत तौर पर व्याख्या कीजिए।

4 औपचारिक व अनौपचारिक लेखन में अंतर स्पष्ट करते हुए लेखन के चरण एवं प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए।

5 किसी भी भाषा के शिक्षण के लिए भाषायी दक्षताओं का विस्तृत ज्ञान होना क्यो जरूरी है ? उदाहरण सहित चर्चा कीजिए।

2.9.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1 मानवीय जीवन में लिखित भाषा के महत्व पर प्रकाश डालिए।

2 लिखित भाषा शिक्षण की मुख्य विशेषताओं पर रोशनी डालिए।

3 मुक्त रचना के विविध रूपों की चर्चा कीजिए।

4 मल्टीमीडिया भाषायी कौशलों के शिक्षण में किस प्रकार मदद कर सकता है, बताइए।

5 पठन की मुख्य विधियों पर रोशनी डालिए ।

2.10 संदर्भ

- सिंह, निरंजन कुमार, माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी शिक्षण, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
- भाई योगेन्द्र जीत, हिंदी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- चतुर्वेदी, शिखा, हिंदी शिक्षण, आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ।

इकाई 3– भाषा शिक्षण की विधियाँ एवं उनका विश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की विधियों का शिक्षण में महत्व

3.3.1 अच्छे शिक्षण की विशेषताएँ

3.3.2 भाषा शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त

3.3.3 भाषा शिक्षण के सूत्र

3.4 व्याकरण अनुवाद प्रणाली

3.4.1 व्याकरण का अर्थ एवं विशेषताएँ

3.4.2 व्याकरण की विशेषताएँ

3.4.3 व्याकरण–शिक्षण के उद्देश्य

3.4.4 व्याकरण की प्रणालियाँ

3.4.4.1 भाषा संसर्ग प्रणाली

3.4.4.2 सिद्धांत प्रणाली

3.4.4.3 व्याख्या प्रणाली

3.5 प्रत्यक्ष पद्धति

3.6 ढाँचागत शिक्षण प्रणाली

3.7 उद्देश्यपरक–सम्प्रेष्णात्मक प्रणाली

3.7.1 सम्प्रेषण का अर्थ

3.7.2 सम्प्रेषण के उद्देश्य

3.7.3 सम्प्रेषण कौशल के प्रकार

3.7.4 कक्षा सम्प्रेषण में सहायक तत्व

3.8 अभ्यास प्रश्न

3.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

3.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

3.9 संदर्भ

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने समझा कि भाषाई दक्षताएँ क्या हैं ? सुनने का कौशल, बोलने का लहज़ा एवं शैली, भाषाई विविधता और हिन्दी के पढ़ने–पढ़ाने पर इसका प्रभाव, सुनने व बोलने के कौशल विकास के स्रोत और सामग्री, रोल प्ले, कहानी सुनाना, परिस्थिति के अनुसार संवाद आदि के विषय में भी समझ बनाई है। इस इकाई में हम हिन्दी भाषा शिक्षण की विधियों के विषय में परिचय प्राप्त करेंगे तथा विश्लेषण करेंगे कि कौन–सी विधि का प्रयोग एवं महत्व क्या है? शिक्षण एक गतिशील तथा सुनियोजित प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी अधिक से अधिक सीखने का अनुभव प्राप्त करें। आज का हिन्दी अध्यापक व्यवसायिक नहीं है। वह आज नौकरी करते हुए इसकी औपचारिकताओं का निर्वाह कर रहा है। अच्छे अध्यापक छात्र के आदर्श बन जाते हैं। छात्र उनका अनुकरण करके बहुत कुछ सीखते हैं। भाषा–अध्यापक में शिक्षण अभिरूचि होनी चाहिए क्योंकि भाषा शिक्षण तभी प्रभावकारी हो सकता है। अध्यापक स्वयं विद्यार्थी को रुचि लेकर पढ़ाये एवं विद्यार्थियों के विषय–रुचि के अनुसार शिक्षण प्रणाली का चयन करे क्योंकि एक ही प्रकार की शिक्षण–प्रणाली से आप अध्यापन नहीं कर सकते, अतः विभिन्न प्रकार की शिक्षण प्रणालियों का प्रयोग विषय एवं रुचि के अनुसार करना चाहिए।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- हिन्दी भाषाशिक्षण की विभिन्न विधियों का विवेचन कर सकेंगे।
- हिन्दी भाषाशिक्षण की विभिन्न विधियों के महत्व को समझ कर पाठ योजना बना सकेंगे।
- हिन्दी भाषाशिक्षण विधियों के मनोवैज्ञानिक व तार्किक पक्षों को समझ कर इसका अध्यापन में प्रयोग कर सकेंगे।
- शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कौन–सी शिक्षण–विधि का कब प्रयोग करना है, यह समझ जायेंगे।
- हिंदी शिक्षण में शिक्षण नीति कौशलों को समझ कर बना सकेंगे।
- कक्षागत परिस्थितियों में वाँछित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अंतः क्रिया– प्रक्रिया का प्रयोग समझ सकेंगे।

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की विधियों का शिक्षण में महत्व

हिन्दी भारत वर्ष की राजभाषा है। यह देश के कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से गुजरात तक वृहत्तर भारत में जनसामान्य की सम्पर्क भाषा है। आज शिक्षा, जनसंचार, व्यापार, पर्यटन, सिनेमा जैसे अनेक माध्यमों से हिन्दी पूरे देश और दुनिया में फैल रही है। हर प्रकार

की शिक्षा की क्रिया भाषा के माध्यम से ही सम्पन्न होती है। इनका सम्बंध अन्योन्याश्रित है। अतः ज्ञान के साथ–साथ भाषा के सीखने पर ध्यान देना भी अति आवश्यक है।

3.3.1 अच्छे शिक्षण की विशेषताएँ

- शिक्षण कोई सरल कार्य नहीं है। यह भी व्यक्ति की प्रतिभा पर आधारित होता है। जैसे कोई व्यक्ति अपनी प्रतिभा के आधार पर रचनाकार बनता है, शिल्पकार बनता है, गायक बनता है, अच्छा खिलाड़ी बनता है, वैसे ही अच्छा शिक्षक बनने के लिए जन्मजात प्रतिभा आवश्यक है। अच्छा भाषा शिक्षक तो प्रतिभावान व्यक्ति ही हो सकता है, क्योंकि भाषा के साथ–साथ रचनात्मक साहित्य भी पढ़ना–पढ़ाना पड़ता है और यह कार्य प्रतिभा की अपेक्षा करता है।
- शिक्षण में अभिरुचि भाषाध्यापक की दूसरी विशेषता कही जा सकती है। बिना अभिरुचि के कोई कार्य कलात्मक ढंग से नहीं किया जा सकता। भाषाध्यापक नियुक्त करते समय मात्र कागज़ी योग्यता न देखकर अध्यापक की अभिरुचि का भली भाँति परीक्षण कर लिया जाना चाहिए। क्योंकि भाषा शिक्षण तभी प्रभावकारी हो सकता है, जब अध्यापक स्वयं रुचि लेकर छात्रों को पढ़ाये। बलात् लादा गया भाषा शिक्षण किसी काम का नहीं होगा।
- भाषाध्यापक को पाठ्यक्रम पढ़ाने में दक्ष होने के साथ ही पाठ्येतर क्रियाकलापों में भी दक्ष होना चाहिए। वादविवाद, कवितापाठ, संगीत, अभिनय, खेल आदि सभी पाठ्येतर क्रियाकलाप हैं, जो औपचारिक शिक्षा के साथ चलते रहते हैं। इनके संचालन में दक्ष अध्यापक छात्र का आदर्श बन जाता है। अध्यापक छात्र द्वारा जितना सम्मानित होगा, वह उतने ही प्रभावशाली ढंग से छात्र के सीखने में सहायता पहुँचा सकेगा।
- समुचित प्रशिक्षण अध्यापक को योग्य बनाता है। भाषाध्यापकों का तो अलग से प्रशिक्षण कार्य चलना चाहिए। जैसे संस्कृत शिक्षकों का अलग प्रशिक्षण कार्य चलता है, वैसे ही हिन्दी अध्यापकों का अलग प्रशिक्षण होना चाहिए तभी योग्य भाषाध्यापक तैयार हो सकेंगे और भाषाध्यापन में परिव्याप्त वर्तमान कमियाँ दूर हो सकेंगी।

3.3.2 भाषाशिक्षण के सामान्य सिद्धान्त

छात्रों की योग्यताओं और रुचियों को ध्यान में रखकर बनायी गयी शिक्षण योजना सफल होती है। भाषाशिक्षण में इसकी विशिष्टताओं को ध्यान में रखना पड़ता है। कुछ विषयों के शिक्षण में सूचनाओं और तथ्यों का विशेष महत्व होता है, पर भाषाशिक्षण में ऐसा नहीं है। इसमें भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखना पड़ता है। नीचे कुछ सिद्धान्तों की चर्चा की जा रही है, जो मुख्यतयाः भाषाशिक्षण में जरूरी होते हैं, इनमें से कुछ का व्यवहार अन्य विषयों के शिक्षण में भी किया जा सकता है।

स्वाभाविकता का सिद्धान्त – भाषा मनुष्य की स्वाभाविक शक्ति है, वह स्वभावतः बोलना सीखता है और सुनकर तथा बोलकर भाषा का विकास करता है। भाषा शिक्षण में इस बोलने व सुनने

के स्वाभाविक सिद्धान्त का ध्यान रखना चाहिए। छोटे बच्चों में सुनकर और बोलकर सीखने की शक्ति प्रौढ़ों से अधिक होती है।

प्रयत्न का सिद्धान्त – भाषाध्ययन प्रयत्न की अपेक्षा करता है। भाषा सीखने में सुलेख, श्रुतलेख, सस्वर वाचन, संवाद आदि कार्यों में प्रयत्न की आवश्यकता पड़ती है। भाषाध्ययन की प्रक्रिया में इसके साहित्यिक रूपों का अध्ययन भी प्रयत्न साध्य होता है। भाषा की शुद्धता के लिए भी पर्याप्त प्रयत्न करना पड़ता है।

लेखनकार्य के पूर्व मौखिक कार्य का सिद्धान्त – भाषा का प्रथम चरण बोलना है, अतः इसके शिक्षण में पहले मौखिक कार्य कराना चाहिए, अर्थात् बच्चे को पढ़ना सिखाना चाहिए। इसके बाद लिखना सिखाना चाहिए। मारिया मांटेसरी इस सिद्धान्त का विरोध करती हैं, पर यह भाषा शिक्षण का अति स्वाभाविक सिद्धान्त है, यही सर्वमान्य सिद्धान्त भी है।

बोलने लिखने में सामंजस्य का सिद्धान्त – छात्र पहले बोले फिर लिखे ये दोनों नितान्त जुड़ी हुई क्रियाएँ हैं। यदि इनमें सामंजस्य नहीं होगा तो भाषा में वर्तनी संबंधी भूलों की भरभार हो जायेगी। भाषा शिक्षण में यह सिद्धान्त लिपि संबंधी अज्ञान और उच्चारण की भूलें ठीक करने में तभी सहायक होगा, जब बोलने–लिखने में सामंजस्य रहेगा।

स्वतंत्रता का सिद्धान्त – भाषा शिक्षण को प्रभावकारी बनाने हेतु विद्यार्थी को स्वतंत्र वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए। दबाव या घुटन भरे वातावरण में वह भाषा नहीं सीख सकता। स्वतंत्र वातावरण में वह अपनी इच्छा से दूसरे के साथ वार्तालाप, वाद–विवाद, चर्चा आदि के माध्यम से सहज ही भाषा सीखने लगेगा। स्वतंत्र वातावरण में वह आत्म प्रकाशन भी करता है।

रुचि का सिद्धान्त – भाषा शिक्षण अत्यन्त रुचिकर ढंग से किया जाना चाहिए। शिक्षक को विनोदपूर्ण ढंग से शिष्टहास्य का प्रयोग करते हुए, बालकों को भाषा सिखानी चाहिए। कवि सम्मेलन, अन्त्याक्षरी, रोचक व्याख्यान आदि के माध्यम से प्रभावकारी भाषा शिक्षण किया जा सकता है। ये सभी कार्यक्रम छात्रों की रुचि के अनुरूप होते हैं।

वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त – विद्यार्थियों की योग्यता, रुचि, प्रवृत्ति, शारीरिक क्षमता, संवेगात्मकता, भिन्न–भिन्न होती है। भाषा एक कौशल है। अतः छात्र का इस पर अधिकार व्यक्तिगत क्षमता के आधार पर ही सम्भव है। इसलिए भाषाशिक्षण के मध्य अध्यापक को प्रत्येक विद्यार्थी की क्षमताओं का आकलन करते हुए, उसकी भाषाई त्रुटियों का निदान करना चाहिए। अध्यापक छात्र का मित्र बनकर उनमें सुधार लाने का प्रयत्न करे। इसके लिए अध्यापक में छात्रों के प्रति सहानुभूति अनिवार्य है।

बालकेन्द्रिता का सिद्धान्त – भाषा शिक्षण बालकेन्द्रित हो। बालक के स्वभाव, वातावरण तथा उसकी योग्यता को ध्यान में रखकर ही यह कार्य किया जाये। जैसे बालक के शब्द भण्डार की अभिवृद्धि करने का प्रयास करते समय उसके शरीर, घर, मौहल्ले या गाँव से संबंधित शब्दों को अवश्य समायोजित करे।

शैशवावस्था में भाषा की त्वरित ग्रहणशीलता का सिद्धान्त – शैशव या बाल्यावस्था भाषा सीखने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होती है। इस अवस्था में बालक की भाषा शक्ति बहुत सक्रिय रहती है। बाद में यह धीमी होती जाती है। पेनफील्ड (कनाडा) के अनुसार दस वर्ष की अवस्था तक बच्चों में अधिक भाषाएँ सीखने की क्षमता रहती है। अतः इस अवस्था में इन्हें कई भाषाएँ एक साथ सरलता से सिखायी जा सकती हैं।

क्रियाशीलता का सिद्धान्त – कक्षा में बालक को सक्रिय बनाकर, उसे भाषा सरलता से सिखायी जा सकती है। अध्यापकों को चाहिए कि कक्षा में छात्रों को निष्क्रिय श्रोता न बने रहने दें, उन्हें भाषा का सक्रिय प्रयोगकर्त्ता बनायें। प्रश्नोत्तर, वार्तालाप, वाद विवाद, काव्यपाठ आदि द्वारा कक्षा में छात्र की सक्रियता बढ़ायी जानी चाहिए।

उद्देश्यों के चयन का सिद्धान्त – भाषाशिक्षण के उद्देश्यों का पहले क्रम निश्चित कर लिया जाना चाहिए, क्योंकि भाषा शिक्षण के अनेक उद्देश्य होते हैं। इनमें कौन–सा उद्देश्य कब लिया जाये, किसे पहले लिया जाये और किसे बाद में इनका क्रम बना लेना चाहिए। भाषा शिक्षण के एक घण्टे में कई उद्देश्य लेकर चलने से एक भी उद्देश्य पूरा नहीं होता।

विषय सामग्री के विभाजन का सिद्धान्त – उद्देश्य निश्चित कर लेने पर, विषय सामग्री को उद्देश्य के अनुसार विभाजित कर लिया जाना चाहिए। अर्थात् यथोचित पाठयोजना बनाकर शिक्षण करें।

अनुकरण का सिद्धान्त – शिशु में अनुकरण की प्रवृत्ति अति प्रबल होती है। यह बाल्यावस्था में ही नहीं, किशोरावस्था भी बलवती बनी रहती है। प्रारम्भ में बालक अनुकरण के आधार पर भाषा सीखता है। वर्णों का उच्चारण, शब्दों का प्रयोग, वाक्य प्रयोग, सब कुछ बालक अनुकरण के आधार पर करता है। शिक्षक जिस रूप में भाषा पढ़ायेगा, छात्र वैसा ही अनुकरण करेगा। वर्तमान में शिक्षक का भाषा ज्ञान ही सन्देह के घेरे में है। शिक्षक द्वारा पढ़ाये गये छात्रों का लचर भाषाज्ञान इसी का परिणाम है। अतः भाषाशिक्षकों को पर्याप्त सतर्क रहना चाहिए।

अभ्यास का सिद्धान्त – अभ्यास सीखने का सर्वाधिक प्रभावकारी नियम है। थार्नडाइक इसे सीखने के महत्वपूर्ण नियम के रूप में मान्यता देते हैं। भाषा एक कौशल है, इसका विकास सतत अभ्यास पर टिका है। चाहे आप कितनी ही भाषाएँ सीख लें, परन्तु अभ्यास के अभाव में आप इनका ज्ञान बचाये नहीं रख सकते। कितने लोग अंग्रेजी अच्छी तरह लिख लेते हैं, पर बोल नहीं सकते, क्योंकि बोलने का अभ्यास नहीं किया। लगातार अभ्यास द्वारा कोई भी भाषा सीखी जा सकती है। भाषा शिक्षण में तो पग–पग पर अभ्यास का महत्व है।

स्वयं संशोधन का सिद्धान्त – छात्र यदि भाषाई भूलें करता है तो वह उसका संशोधन भी स्वयं ही करता है। भाषा की ध्वनियों का गलत उच्चारण करने पर जब वह अपने सहयोगियों के उपहास का पात्र बनता है तो स्वयं अपने दोष का परिमार्जन करने की चेष्टा करता है। स्वयं संशोधन की शक्ति बालक को भाषा सीखने में पर्याप्त सहायता देती है। इसके अभाव में छात्र की भाषा सीखने की शक्ति क्षीण हो जाती है।

बहुमुखी प्रयास का सिद्धान्त – भाषाशिक्षण में सामूहिक प्रयास का बहुत बड़ा महत्व है। भाषा के अतिरिक्त छात्र कई विषय पढ़ता है। भाषा अध्यापक से शुद्ध भाषा प्रयोग समझते हैं। अतः भाषाशिक्षण एक सामूहिक प्रयास है। विद्यालय के सभी विषयों के अध्यापन में शुद्ध भाषा प्रयोग के सामूहिक प्रयास किये जाने चाहिए।

शिक्षण सूत्रों के प्रयोग का सिद्धान्त – हर्बर्ट स्पेन्सर द्वारा निर्धारित शिक्षण विधि के आधार पर भाषा शिक्षण अत्यन्त प्रभावकारी होगा।

3.3.3 भाषा शिक्षण के सूत्र

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हर्बर्ट स्पेन्सर ने शिक्षण विधि पर विचार करते समय शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए, कुछ सामान्य शिक्षण सूत्रों की रचना की। इनमें कई ऐसे सूत्र हैं जिनका प्रयोग भाषा शिक्षण में भी किया जा सकता है। भाषाशिक्षण में प्रयुक्त किये जा सकने वाले शिक्षण सूत्र ये हैं–

स्थूल से सूक्ष्म की ओर – इसे 'मूर्त से अमूर्त' की ओर भी कहा जा सकता है। कोई वस्तु स्थूल रूप में दिखती है, पर उसका अर्थ सूक्ष्म होता है। गाय स्थूल है, इसे देखकर गाय का प्रत्यय (सूक्ष्म) बनाया जायेगा। शिक्षण में मॉडल, चार्ट आदि दिखाकर किसी वस्तु का वर्णन करना आसान होता है।

ज्ञात से अज्ञात की ओर – बालक जो बात जानता है उसे आधार बनाकर अज्ञात बात या तथ्य का ज्ञान कराना होता है।

पूर्ण से अंश की ओर – भाषा के सन्दर्भ में यह सूत्र बहुत सटीक है। पहले वाक्य, फिर शब्द और तब वर्ण की शिक्षा दी जाये। साहित्य के सन्दर्भ में पहले पूर्ण कविता फिर उसके खंड का वाचन किया जाये।

प्रकृति अथवा स्वभाव का अनुसरण – विद्यार्थियों के स्वभाव को जानकर प्राकृतिक वातावरण में शिक्षण किया जाये। भाषा शिक्षण में इन दोनों तथ्यों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

सरल से कठिन की ओर – विद्यार्थी को सरल विषय पहले पढ़ाये जायें, कठिन विषय बाद में।

विश्लेषण से संश्लेषण की ओर – भाषाशिक्षण में शब्द, वाक्य, भाव, अर्थ आदि का विश्लेषण कर इन्हें छोड़ न दिया जाये अपितु इनका संश्लेषण कर एक स्पष्ट विचार बनाने की प्रेरणा छात्रों को दी जाये।

मनोवैज्ञानिकता से तार्किकता की ओर – छात्रों की योग्यता और रुचि के अनुकूल विषय को पहले पढ़ाया जाये। शिक्षण सामग्री के तार्किक क्रम पर बाद में ध्यान दिया जाये।

विशेष से सामान्य की ओर – विद्यार्थियों को पहले उनके अपने वातावरण से परिचित कराने के बाद उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान की ओर बढ़ानाउ चाहिए। व्याकरण के उदाहरण पहले प्रस्तुत करें, तत्पश्चात् उनका सामान्यीकरण करें। बालकों के समक्ष पहले विशेष पदार्थों एवं क्रियाओं को प्रस्तुत करें, इसके बाद सामान्य निष्कर्ष पर पहुँचें।

अनिश्चित से निश्चित की ओर – भाषा शिक्षण में अस्पष्ट शब्दार्थों से स्पष्ट एवं निश्चित तथा सूक्ष्म पदार्थों की ओर बढ़ा जाये। दृष्ट वस्तुओं के प्रति बालक का एक अनिश्चित विचार होता है। इन्हीं अनिश्चित विचारों के सहारे निश्चित विचारों की ओर बढ़ा जाये।

3.4 व्याकरण अनुवाद प्रणाली

भाषा–शिक्षण में व्याकरण–शिक्षण विद्यार्थियों के लिए एक आवश्यक एवं मुख्य तत्त्व के रूप में माना जाता है। यह उनको शुद्ध भाषा का प्रयोग सिखाने, सृजनात्मक प्रतिभा का विकास करने तथा भाषा विश्लेषण एवं तर्क शक्ति का विकास करने के उद्देश्य से सिखाया जाता है। व्याकरण के बिना भाषा–शिक्षण अधूरा माना जाता है।

3.4.1 व्याकरण का अर्थ एवं विशेषतायें

'व्याकरण' शब्द 'वि + आ + कृ धातु + लयुट् के योग से बना है, जिसका तात्पर्य है 'व्याक्रियन्ते' अर्थात् जिसके द्वारा अर्थ स्वरूप के माध्यम से शब्दों की व्याख्या होती है।

महर्षि पाणिनी और पतंजलि ने व्याकरण को शब्दानुशासन कहा है अर्थात् व्याकरण भाषा को अनुशासित करता है।

डॉ. स्वीट के अनुसार, ''व्याकरण भाषा का व्यावहारिक विश्लेषण अथवा उसका शरीर विज्ञान है।''

हैजलिट के अनुसार, ''भाषा की विशेष प्रकार की रचना का वर्णन व्याकरण है।''

जैगर ने ''प्रचलित भाषा सम्बन्धी नियमों की व्याख्या को व्याकरण माना है।''

3.4.2 व्याकरण की विशेषताएँ

- व्याकरण का ज्ञान भाषा के शुद्ध प्रयोग के लिए आवश्यक है क्योंकि व्याकरणशास्त्र में शब्दानुशासन है अर्थात् व्याकरण ही भाषा को अनुशासन कर नियमबद्ध करता है।
- व्याकरण भाषा के स्वरूप, बनावट को संवारकर उसकी उचित व्यवस्था करता है।
- भाषा के शरीर का विज्ञान व्याकरण ही है तथा भाषा का व्यावहारिक विश्लेषण करता है।
- व्याकरण प्रचलित भाषा सम्बन्धी नियमों की व्याख्या है।

3.4.3 व्याकरण–शिक्षण के उद्देश्य

व्याकरण–शिक्षण के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

पं. लज्जाशंकर झा ने लिखा है, ''भाषा का शुद्ध रूप पहचानने में छात्रों को सक्षम और समर्थ बनाना ही व्याकरण का उद्देश्य है।''

– विद्यार्थी भाषा की ध्वनि, लिपि, शब्द–ज्ञान, शब्द–योजना, शब्द–शक्तियों को समझने योग्य होता है।
– वह भाषा में प्रयोग होने वाले छन्दों, अलंकारो तथा रसों का ज्ञान सीखने व समझने के योग्य होता है।
– विद्यार्थी शुद्ध वर्तनी, वाक्य–रचना के नियमों तथा विराम–चिह्नों के प्रयोग की क्षमता को विकसित करता है।
– विद्यार्थियों में सृजनात्मक प्रवृत्ति तथा तर्कशक्ति को पैदा करना।
– विद्यार्थियों को व्याकरण के नियमों का ज्ञान कराना और उनमें नियमों के व्यवहारिक प्रयोग की योग्यता को विकसित करना।

3.4.4 व्याकरण की प्रणालियाँ

(1) भाषा संसर्ग प्रणाली

(2) सिद्धान्त प्रणाली

(क) पाठ्य पुस्तक प्रणाली

(ख) सूत्र प्रणाली

(3) व्याख्या प्रणाली

(क) आगमन से निगमन प्रणाली

(ख) विश्लेषण प्रणाली

(ग) सहयोग प्रणाली

3.4.4.1 भाषा संसर्ग प्रणाली

भाषा संसर्ग प्रणाली का अर्थ है कि भाषा की किसी भी रचना को व्याकरण के नियम व उदाहरण से समझाना। इसमें व्याकरण के नियम रटवाने की आवश्यकता नहीं होती, न ही नियमों को अलग समय देकर समझाने की आवश्यकता होती है। पाठ्यपुस्तक, रचना, संवाद, प्रश्नोत्तर द्वारा ही अभ्यास के द्वारा व्याकरण–सम्मत भाषा सिखाने पर बल देती है। इस विधि में व्याकरण की शिक्षा दिए बिना ही भाषा का शुद्ध रूप सिखा दिया जाता है। भाषा का व्याकरण अनुकरण द्वारा अपने आप आ जाता है।

गुण :

- इसमें व्याकरण की पाठ्य पुस्तक की आवश्यकता नहीं होती है।
- यह मनोवैज्ञानिक विधि है। यह प्रणाली शिक्षण को रोचक व क्रियाशील बनाती है। विद्यार्थी केन्द्रित भी होती है।
- इसमें विद्यार्थियों पर मानसिक दबाव नहीं पड़ता है क्योंकि भाषा शिक्षण प्रक्रिया में ही व्याकरण का ज्ञान हो जाता है।

दोष :

- इस विधि में समय अधिक लगता है।
- व्याकरण के सहस्त्रों नियम भाषा संसर्ग विधि से सीखने मुश्किल हैं।
- नियमों का ज्ञान न होने से विद्यार्थियों में अपनी अशुद्धियाँ स्वयं शुद्ध करने की क्षमता नहीं होती।
- अध्यापक इसके लिए आश्वस्त नहीं हो सकता कि विद्यार्थियों ने व्याकरण सम्मत शुद्ध भाषा सीख ली है या नहीं।

3.4.4.2 सिद्धांत प्रणाली

विद्यालयों में अधिकतर सिद्धांत प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। यह दो प्रकार से उपयोग में लाई जाती है–

पाठ्य पुस्तकः प्रत्येक विद्यालय में किसी भी भाषा के व्याकरण का ज्ञान व्याकरण की एक निर्धारित पुस्तक द्वारा दिया जाता है। व्याकरण की पाठ्य पुस्तक में परिभाषाएँ, नियम तथा सिद्धांत उपलब्ध होते हैं और अध्यापक विद्यार्थियों को इन्हीं नियमों को रटने का आदेश देता रहता है।

गुण :

- यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए उपयोगी हो सकती है क्योंकि परिभाषाओं के तर्क के आधार समझने की क्षमता होती है।
- कठिन शब्दों को पुस्तक में संकलित करने से उनको बार–बार पढ़ना, समझना तथा जानना आसान हो सकता है।
- पुस्तक में अभ्यास–कार्य के द्वारा नियम को ग्राह्य होने की जांच का पता करना सरल हो सकता है।
- विद्यार्थी घर जाकर भी पुन : अध्ययन से इसे अच्छी प्रकार समझ सकता है।

दोष :

- यह विधि प्राथमिक कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि मनोवैज्ञानिक तथा शिक्षण प्रक्रिया के प्रतिकूल है।
- इस विधि के नियम कष्टदायक हैं और समय भी नष्ट करते हैं।
- बिना समझाए इन नियमों को प्रयोग में लाना बोझिल कार्य लगता है।
- विद्यार्थियों की मानसिक शक्ति विकसित नहीं होती।
- यह विधि अमूर्त भावों को समझ नहीं पाते हैं। श्री बेनार्ड के अनुसार, ''बालकों की दृष्टि स्थूल पर ही जमती है, सूक्ष्म पर नहीं, वे सिद्धांतों को नहीं वस्तुओं को जानना चाहते हैं।''

सूत्र प्रणाली: इस प्रणाली में व्याकरण के नियम सूत्र रूप में रख दिए जाते हैं और उनके लक्षण तथा उदाहरण बता दिए जाते हैं। यह प्रणाली पाठ्य पुस्तक प्रणाली का रूपांतर है। हिन्दी विद्वानों ने भी हिन्दी व्याकरण की रचना सूत्र रूप में की है। जैसे विशेषण के चार विभेद हैं, विद्यार्थी उन भेदों के नाम व परिभाषाएं सूत्र के रूप में रटने लगते हैं।

गुण :

- यह प्रणाली पाठ्य–पुस्तक के समान है। विद्यार्थी को सिद्धांत रटा कर नियम से उदाहरण की ओर चलती है।
- सूत्र प्रणाली में एक सूत्र को रटवाकर आगे व्याकरण के विशेष विषय का ज्ञान दिया जाता है।
- यह उच्च कक्षाओं में प्रयोग में लाई जा सकती है, जहाँ विद्यार्थियों का बौद्धिक व मानसिक स्तर विकसित होता है।

दोष :

- निम्न कक्षाओं एवं माध्यमिक कक्षाओं के लिए अनुपयुक्त है तथा सर्वथा दोषयुक्त है।
- विद्यार्थियों पर अनावश्यक दबाव डालती है क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक है।
- यह नीरस तथा शुष्क है। विद्यार्थियों की रुचि इसमें नहीं बनती है।
- प्रयोग और अभ्यास का अभाव है।

3.4.4.3 व्याख्या प्रणाली

इस प्रणाली में व्याकरण के नियम समझाने के लिए उसकी पूरी व्याख्या अर्थात् विश्लेषण किया जाता है, जिससे विद्यार्थियों को बाकी प्रणालियों के अपेक्षाकृत जल्दी समझ आ जाता है। इस प्रणाली को दो प्रकार से प्रयोग में लाया जाता है।

आगमन–निगमन प्रणाली या विश्लेषण प्रणालीः इस विधि को 'प्रयोग–विधि' भी कहा जाता है। इस प्रणाली के अनुसार व्याकरण के किसी नियम को समझाने के लिए विद्यार्थियों के समक्ष अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं। प्रश्नोत्तर, तर्क–वितर्क तथा विश्लेषण से सिद्धांत बनवाए जाते हैं। इस प्रणाली में निम्नलिखित दो विधियों के प्रयोग से व्याकरण के नियम आसानी से समझाए जा सकते हैं–

आगमन विधि (Inductive Method): इस विधि में विद्यार्थियों के सामने श्यामपट्ट पर उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं, जैसे

.... **मोटी** लड़की दौड़ रही है।

.... **सुन्दर** लड़का बैठा है।

.... मेरे पास **एक** किताब है।

.... **विद्वान** व्यक्ति सबका आदर करते हैं।

ऊपर चारों वाक्य उदाहरण रूप में प्रस्तुत किए गए हैं।

फिर उदाहरणों का विश्लेषण किया जाता है। जैसे – ऊपरलिखित उदाहरणों में 'मोटी', 'सुन्दर', 'एक', 'विद्वान' शब्द विशेषण हैं जो क्रमशः लड़की, लड़का, किताब व व्यक्ति अर्थात संज्ञा शब्दों की विशेषता को प्रकट कर रहे हैं। फिर बच्चों की सहायता करते हुए बच्चों से नियम (परिभाषा) बनवाया जाता है। उदाहरण के लिए–

परिभाषा बनाना :

जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताएँ, उन्हें विशेषण कहते हैं। अर्थात् आगमन विधि के निम्नलिखित सोपान होंगे–

– उदाहरणों को प्रस्तुत करना।

– उदाहरणों को विश्लेषित करना।

– नियम बनाना।

निगमन विधि (Deductive Method) :

– नियमों की पड़ताल।

– नियमों के उदाहरण।

आगमन विधि के द्वारा नियम बनाने के पश्चात् विद्यार्थियों से उदाहरण पूछे जाएं। जैसे वे उपर्युक्त उदाहरणों को समझकर जो परिभाषा बनाने में सफल हुए हैं, अब उसके लिए उदाहरण भी प्रस्तुत कर सकें। उनके उचित उदाहरण बताने के पश्चात् परिभाषा के आगे उदाहरण लिख दिया जाए। जैसे हमने ऊपर 'विशेषण' की परिभाषा विद्यार्थियों की सहायता से बनवाने की बात कही है। उदाहरण के लिए–

– घोड़ा **पालतू** पशु है।

– यह **काली** बिल्ली है।

इस विधि में विद्यार्थियों को पूरी तरह सक्रिय रखते हुए ऊपरलिखित पाँच सोपानों में आगमन से निगमन विधि का प्रयोग करके उन्हें व्याकरण के किसी भी विषय को आसानी से समझा सकेंगे। वैसे आगमन विधि का प्रयोग उदाहरण से नियम बनाते हुए परिभाषा बनाना तथा निगमन विधि में नियम और परिभाषा बनाते हुए उदाहरण की ओर चलना होता है। परंतु इन दोनों के उचित प्रयोग से विद्यार्थी बहुत ही सरलतापूर्वक समझ जाते हैं। यह दोनों एक दूसरे की पूरक बनती है। अकेली निगमन विधि से व्याकरण शिक्षण नीरस तथा शुष्क होगा और यह सूत्र प्रणाली तथा पाठ्यपुस्तक प्रणाली का ही रूप होगी। अतः अकेली निगमन विधि का प्रयोग अपने आप में अधूरा होगा। आगमन विधि भी निगमन विधि से मिलकर व्याकरण को समझाने से पूर्ण होगी। कई विद्वान् आगमन प्रणाली या निगमन प्रणाली को अलग–अलग प्रयोग के रूप में उपयोग करने के पक्ष में हैं परंतु उचित, मनोवैज्ञानिक विधि दोनों के समन्वय प्रयोग में ही है।

सहयोग प्रणालीः इस प्रणाली में व्याकरण के नियम अलग रूप में नहीं पढ़ाये जाते, बल्कि पाठ्य पुस्तक व रचना–कार्य करवाते हुए अध्यापक नियमों तथा सिद्धांतों से परिचित करवाता है। अध्यापक व्याकरण को पाठ्यपुस्तक अथवा लेखन–कार्य के समवेत करके पढ़ाता है। इसे समवाय या सहयोग प्रणाली कहा जाता है। इसमें भी प्रयोग प्रणाली की भाँति उदाहरण रखे जाते हैं। फिर उन्हें प्रासंगिक ढंग से पाठ्य–पुस्तक या लेखन–कार्य में समझा दिया जाता है।

गुण :

- इस प्रणाली में विद्यार्थियों के समक्ष उदाहरण उपस्थित किए जाते हैं, जिससे वह आसानी से समझते हैं।
- विद्यार्थियों की रटन्त प्रणाली की उपेक्षा करके उनका बौद्धिक विकास करता है।
- यह विधि सरल, सरस तथा रोचक है।
- इस प्रणाली में विद्यार्थियों की सक्रियता बनी रहती है तथा यह शिक्षण–सूत्रों पर आधारित है।

दोष :

- इस विधि से व्याकरण का ज्ञान देने में अधिक समय लगता है।
- इस विधि द्वारा केवल व्यावहारिक व्याकरण की शिक्षा दी जा सकती है।
- नियमों की पूरी तरह जानकारी न होने से शुद्ध व अशुद्ध शब्दों से अवगत नहीं हो पाते। अतः आत्मविश्वास नहीं बनता है। भाषा प्रयोग में कठिनाई आती है।

किस स्तर के लिए कौन–सी विधि अपनाई जाए?

उपर्युक्त प्रणालियों के गुण और दोष दोनों दृष्टिगत होते हैं। किसी एक विधि के अनुसार व्याकरणशिक्षण उचित प्रतीत नहीं होता, न ही प्रभावी रह सकता है। अतः व्याकरणशिक्षण के लिए एक विधि न अपना कर विद्यार्थियों की बौद्धिक व मानसिक क्षमता को देखते हुए दो–तीन विधियों के संयुक्त प्रयोग से व्याकरण–शिक्षण सरलतापूर्वक हो सकता है।

3.5 प्रत्यक्ष पद्धति (Direct Method)

किसी नवीन भाषा के शिक्षण में प्रत्यक्ष विधि का उपयोग किया जाता है। जिस प्रकार मातृभाषा की शिक्षा देते समय बालक का परिचय प्रत्यक्ष वस्तुओं से कराया जाता है, फिर बालक उस वस्तु से संबंधित वाक्य बोलता है। यही विधि नवीन भाषा सिखाने में भी प्रयुक्त की जानी चाहिए। जैसे – गाय का चित्र दिखाकर बालक को बतायें – **यह गाय है**। अन्य भाषाभाषी

शिक्षार्थी को उसकी भाषा का समानार्थी शब्द भी बतायें। बार–बार आवृत्ति से शिक्षार्थी **'गाय'** शब्द का प्रयोग करना सीख जाता है।

इसी प्रकार शिक्षक नये–नये शब्दों व लोकोक्तियों तथा मुहावरों से शिक्षार्थी को परिचित कराता है। अध्यापक इनका प्रयोग करता है, शिक्षार्थी इनकी आवृत्ति करते हुए सीखता जाता है। प्रत्यक्ष विधि में मातृभाषा का प्रयोग उपयुक्त नहीं होता। इससे भावप्रकाशन में बाधा पड़ती है। शिक्षक के साथ शिक्षार्थी वाक्यों की आवृत्ति कर सीखता है, उसे मातृभाषा की बहुत आवश्यकता नहीं पड़ती।

यह पद्धति व्याकरण की शिक्षा के लिए अधिक उपयुक्त है। इस विधि की कुछ निश्चित सीमाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं–

- प्रत्यक्ष विधि द्वारा केवल उन संज्ञाओं का ज्ञान कराया जा सकता है, जिनके चित्र बन सकते हैं। भाववाचक संज्ञाओं, जैसे भावुकता, मित्रता, सौन्दर्य आदि का ज्ञान नहीं कराया जा सकता।
- मातृभाषा की पैठ हमारे मन तक होती है। इसका हमारे विचारों के साथ अटूट संबंध होता है। जब हम किसी दूसरी भाषा का वाक्य बोलते हैं, तो सबसे पहले हमारे मन में मातृभाषा का वाक्य आता है।
- इस पद्धति में वाचन व लेखन पर ध्यान नहीं दिया जाता, अतः विद्यार्थी भाषा पर अधिकार नहीं कर पाता।
- इस पद्धति से कुछ प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति ही नयी भाषा सीख सकते हैं। सामान्य शिक्षार्थी नवीन भाषा को जल्दी नहीं सीख पाते।

3.6 ढाँचागत शिक्षण प्रणाली

नई पद्धति की खोज या अन्यत्र प्रचलित किसी विधि या पद्धति को ग्रहण करने के प्रसंग में एक आवश्यक बात जिसका ध्यान रखना चाहिए–वह यह है कि जो भी पद्धति या विधि हम स्वीकार करें या जिसका हम समर्थन करें, यह ऐसी अवश्य हो कि उसका साधारण से साधारण स्थितियों में और साधारण से साधारण शिक्षक के द्वारा भी व्यापक रूप से प्रयोग सम्भव हो सके। कहना न होगा कि विभिन्न भाषाओं के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों की खोज, प्रयोग, शोध एवं अनुभव के आधार पर वर्तमान युग में संरचनात्मक पद्धति को उपयुक्त व श्रेयस्कर माना जाता है। भाषा को सीखने में शब्दावली उपार्जन की अपेक्षा वाक्य संगठन पर अधिकार करना अधिक उपादेय है। परमावश्यक वाक्य संगठनों में विद्यार्थियों को विविध रूप से घनीभूत अभ्यास कराना चाहिए। इस क्रिया को पर्याप्त अवसर प्रदान करने में शब्दावली तो अनायास ही गौण वस्तु के रूप में उपलब्ध हो जाती है। जहाँ तक कि संरचनात्मक का प्रश्न है यह एक अधुनातन विधि है क्योंकि इस पद्धति ने समस्त विधियों की कमियों को दूर करने का प्रयास किया है। यह पद्धति भाषा शिक्षण की नई मान्यताओं पर आधारित है इसलिए इस पद्धति के अनेक लाभ हैं–

प्रमुख इकाई वाक्य—आधुनिक भाषा विज्ञान की एक मान्यता है कि भाषा की प्रमुख इकाई वाक्य है। भारतीय भाषाशास्त्री तो सदा से ऐसा मानते आये हैं। शब्दों का यथार्थ अर्थ तो वाक्य में उपलब्ध होता है। मध्ययुगीन शब्दमात्र पर दी जाने वाली महत्ता समाप्त हुई। अब उच्चारण में एकाकी ध्वनियों का अभ्यास नहीं कराया जाता बल्कि पूरे वाक्य को उच्चारित किया जाता है। अधुनातन भाषा शिक्षण विधि, संरचनात्मक पद्धति में ये मान्यतायें स्पष्टतया प्रतिफलित दिखाई पड़ती हैं। इस पद्धति में वाक्य आधार बना लिया जाता है और उसकी सहायता से विशेष व्याकरणिक गठन अथवा शब्दावली का अभ्यास कराया जाता है। यह वाक्य गठन विभिन्न प्रकार से बार—बार कराया जाता है। हिन्दी भाषा में कर्त्ता—कर्म—क्रिया, कर्ता—अव्यय—क्रिया, कर्ता—संज्ञा—क्रिया आदि विभिन्न प्रकार के वाक्यों का अभ्यास विद्यार्थियों को कराया जा सकता है। हिन्दी के क्रिया—पदों को विभिन्न वाक्यों में रखकर वाक्य—गठन का अभ्यास विद्यार्थियों को करवाना चाहिए। विभिन्न प्रकार के वाक्य गठन द्वारा हिन्दी भाषा का ज्ञान विद्यार्थियों को करवाया जा सकता है।

उदाहरणार्थ—निम्न वाक्यों में ''ता है'' क्रिया पद विशेष है और उसे इन वाक्यों द्वारा समझाया जा सकता है—

विनोद गाता है।

विनोद पढ़ता है।

विनोद खाता है।

विनोद लिखता है।

विनोद हँसता है।

इस प्रकार के समान गठन विद्यार्थियों को समझाये जा सकते हैं। व्याकरण के नियमों की व्याख्या करने के बजाय ''पैटर्न प्रैक्टिस प्रणाली के द्वारा नई भाषा की ध्वनियाँ, शब्द—रूप, वाक्य—रूप आदि सिखाये जायें। उदाहरणार्थ—'आभा ने आम खाये'। वाक्य में निहित व्याकरण का नियम (सकर्मक क्रिया का लिंग, वचन भूत निश्चयार्थ में कर्म के लिंग वचन के अनुसार होते हैं न कि कर्ता के अनुसार क्योंकि कर्ता के बाद ने' कारक चिन्ह लगा हुआ है) रटवाने की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा है कि इस तरह के कई ऐसे वाक्यों का अभ्यास कराया जाये जैसे ''प्रभात ने आम खाये'', 'रमेश ने बहुत आम खाये' आदि। शब्द—रूप अलग सिखाने की अपेक्षा वाक्यों में प्रयोग करके अभ्यास कराना चाहिये। वाक्य—गठन का अभ्यास इसी क्रम के अनुसार करना चाहिए। किसी प्रसिद्ध भाषाशास्त्री का कहना है कि ''आधुनिकतम ज्ञान रखने वाले भाषा—शिक्षक के लिए वाक्य—गठन का उचित क्रम निर्धारण उतना ही आवश्यक है जितना कि शब्दावली का उचित क्रम निर्धारण।'' संरचनात्मक पद्धति शब्दावली की अपेक्षा वाक्य गठन पर अधिक बल देती है और भाषा शिक्षण की इस नई मान्यता पर आधारित है कि ''वाक्य विचार की इकाई है।''

उच्चरित रूप पर बल—परम्परागत भाषा शिक्षण भाषा के लिखित रूप पर अधिक बल देता था और अब भी हमारे स्कूलों में इसी विधि द्वारा भाषा—ज्ञान कराया जाता है। किन्तु आधुनिक भाषा विचार—शास्त्र भाषा के उच्चरित रूप पर बल देता है। भाषा—विज्ञान की यह आधारभूत मान्यता है कि भाषा का प्राथमिक रूप उच्चरित है और लिखित रूप एक द्वितीय रूपमात्र है। हमारे स्कूलों में इस मान्यता के अनुसार शिक्षण नहीं होता। लिखना, पढ़ना, पहले सिखाया जाता है, और बोलने और सुनने की क्षमता की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। इस मान्यता की कसौटी पर भी संरचनात्मक पद्धति खरी उतरती है क्योंकि इस पद्धति में सुनने और बोलने पर जोर दिया जाता है, साथ ही यह माना जाता है कि जिसे बोलना आ गया वह पढ़ना लिखना स्ंवयमेव सीख जाता है किन्तु जिसे केवल पढ़ना—लिखना आता है वह बिना सिखाये बोल नहीं सकता। रॉबर्ट लाडो ने बोलने की क्षमता का महत्व बताते हुए कहा है कि ''जब तक विद्यार्थी ठीक से बोल न सके, तो समझना चाहिये कि उसे भाषा का एक वाक्य भी नहीं आता।''

भाषा सीखने के स्वाभाविक क्रम पर आधारित—भाषा सीखने का स्वाभाविक क्रम है सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। संरचनात्मक पद्धति इसी क्रम के अनुसार भाषा—शिक्षण की पक्षपाती है। बालक पहले भाषा दूसरों से सुनता है फिर सुनते—सुनते अनुकरण प्रवृत्ति के कारण बोलने भी लगता है और फिर पढ़ना और लिखना भी प्रारम्भ कर देता है, किन्तु हमारे स्कूलों में यह क्रम भंग कर दिया जाता है। नीरस ढंग से बालक को कई महीने तक लिखना—पढ़ना सिखाया जाता है जिसके बुरे परिणाम किसी से छिपे नहीं हैं। बी.डी. श्रीवास्तव ने अपने एक लेख में लिखा है कि ''बोलना ही वास्तव में भाषा है, लिखित भाषा तो केवल उसका प्रतिरूप वास्तविकता से एक कदम पीछे हटा हुआ है, जैसे कि तुम एक वास्तविक व्यक्ति हो और तुम्हारा चित्र तुम्हारा प्रतिरूप है।''

'सरल से जटिल की ओर' सूत्र पर आधारित—किटसन नामक विद्वान ने भी कहा है कि किसी भाषा को बोलना, पढ़ने और लिखने की अपेक्षा कहीं अधिक सरल है। अतः यह पद्धति इस सूत्र वाक्य पर भी खरी उतरती है। वाक्य—गठन से परिचित कराते समय भी इस सूत्र वाक्य का ध्यान रखा जाता है। पहले सरल वाक्य सिखाये जाते हैं और फिर जटिल, जैसा कि लाडो ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि ''किसी भाषा के वाक्य—गठन के नमूने सिखाने के लिए कोई एक निश्चित श्रेणी—बद्ध स्तर नहीं है। किसी भी प्रकार की क्रमिक संचित सुव्यवस्थित प्रगति जो सरल से कठिन, कठिन से कठिनतर वाक्य—गठन की दृष्टि से हो, भाषाविद की दृष्टि से संतोषजनक होगी।'

उपयुक्त वातावरण निर्माण— मातृभाषा—शिक्षण में भी सुनना और बोलना महत्व रखता है क्योंकि कक्षा में बोली जाने वाली भाषा एवं घर में बोली जाने वाली भाषा में अन्तर होता है। कक्षा में विद्यार्थी शुद्ध भाषा बोलने एवं लिखने का अभ्यस्त हो जाता है। वाक्यों के गठन का अभ्यास करने के लिये उपयुक्त वातावरण तैयार हो जाता है।

क्रियाशीलता, रूचि, सजीवता से अनुप्रमाणित कक्षा का वातावरण

शिक्षण का जीवन की वास्तविकता से संबंध : प्रत्येक वाक्य गठन में प्रयुक्त होने वाली परिस्थितियाँ जितनी ही वास्तविक, ज्ञान एवं अनुभव के क्षेत्र में होंगी, अध्यापन भी उतना ही स्पष्ट एवं सफल होगा।

प्रयोगात्मक व्याकरण पर बल : वर्तमान काल में प्रयोगात्मक व्याकरण शिक्षा पर अधिक बल है। यह विधि भी इसी नई मान्यता पर आधारित है।

अभ्यास, अभ्यास और अभ्यास : भाषा के कौशल में निपुणता प्राप्त करने के लिये अधिक से अधिक अभ्यास पर बल दिया जाता है।

शुद्ध उच्चारण पर बल : भाषा में सबसे जटिल समस्या उच्चारण की है। इसमें भाषा प्रयोगशाला में सप्ताह में दो–तीन दिन शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराया जाता है।

विभिन्न स्तरों का प्रयोग : प्राथमिक स्तर पर संरचनात्मक अथवा ढाँचागत पद्धति अधिक लाभदायक है। क्योंकि भाषा अभ्यास से आती है। प्राथमिक स्तर के लिये यह विधि अति उत्तम है। इस पद्धति के प्रयोग से विद्यार्थी संभाषण की कला में दक्ष हो जाता है।

3.7 उद्देश्य परक सम्प्रेष्णात्मक प्रणाली

3.7.1 सम्प्रेषण का अर्थ

सम्प्रेषण का अर्थ होता है कि किसी विचार या सन्देश को एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रेषित करने वाले द्वारा भेजना तथा प्राप्त करने वाले द्वारा प्राप्त करना। प्रेषण सफल तभी कहा जाता है जब दोनों सहयोगात्मक प्रक्रिया में हिस्सा लें। ये एक ऐसा माध्यम है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को इस प्रकार प्रभावित कर सके ताकि वाँछित उद्देश्य की प्राप्ति हो सके। सम्प्रेषण एक ऐसा माध्यम है जिसमें विचारों का आदान प्रदान होता है। जिसमें दोनों सहयोगियों को परस्पर लाभ होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में आज के आधुनिक युग में इस विधि का प्रयोग शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिये किया जाता है। अर्थात शिक्षक एवं शिक्षार्थी में परस्पर सहयोग के माध्यम से शिक्षक शिक्षार्थी को इस प्रकार से अपने शिक्षण द्वारा प्रभावित करता है जिससे कि वह अपने शिक्षार्थी को अधिक से अधिक प्रभावी ढंग से ज्ञान प्रदान कर सके और वाँछित उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके। सम्प्रेषण पद्धति इस विचार पर आधारित है जिससे कि छात्र में वास्तविक अर्थ का संवाद करने के लिये सीखने वाली भाषा सफलतापूर्वक आ जाती है। जब शिक्षार्थियों को वास्तविक संचार में सम्मिलित किया जाता है तो भाषा अधिग्रहण के लिये उनके प्राकृतिक

कौशलों का उपयोग किया जाता है, जिससे उन्हें भाषा का प्रयोग करना एवं सीखना भली प्रकार आ जाता है। यह शिक्षण प्रणाली भाषा शिक्षण के लिये एक आदर्श पद्धति है। यह शिक्षा के वाँछित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अध्ययन के साधनों एवं तरीकों पर बातचीत के रूप में अधिक ज़ोर देती है। इस प्रणाली का प्रयोग करने वाले आदर्श वातावरण में सीखते हैं एवं एक दूसरे के साथ बातचीत के माध्यम से भाषा का अभ्यास करते हैं। शिक्षक प्रमाणिक ग्रंथों के अध्ययन का प्रयोग भाषा सीखने के अतिरिक्त, अन्य उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संयुक्त शिक्षार्थी भागीदारी के साथ व्यक्तिगत अनुभवों के विषय में वार्तालाप करते हैं। इसमें शिक्षक छात्रों की भाषा कौशल को बढ़ावा देने के लिये पारम्परिक व्याकरण के क्षेत्र के बाहर विषयों को पढ़ाते हैं। यह विधि भाषा सीखने के वातावरण में शिक्षार्थियों के अपने व्यक्तिगत अनुभवों को सम्मिलित करती है। इसी क्रम में लक्षित भाषा सीखने के अलावा, ये अपने सीखने की प्रक्रिया में अपने इस अनुभव पर ध्यान केंद्रित कर प्रोत्साहित करने का सफल प्रयास करती है। इस विधि का लक्ष्य अथवा उद्देश्य भाषा में संवाद करने की क्षमता का विकास करना है। यह पूर्व के विचारों के विपरीत है जिसमें व्याकरण एवं व्याकरणिक योग्यता को सामान्यतः सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है।

3.7.2 सम्प्रेषण के उद्देश्य

समूह को सम्बोधित करने के कौशल का विकास :– शिक्षक इस विधि द्वारा छात्रों में समूह आदि को सम्बोधित करने के कौशल का विकास करता है। वह छात्रों को अनेक प्रकार के विषयों पर संवाद करने के लिये प्रेरित करता है।

समूह को विषय वस्तु से सरल ढंग से परिचित कराना :– इस विधि द्वारा शिक्षक व्याकरण की जटिलताओं से परे छात्रों के संवाद पर विशेष ध्यान देता है एवं विषय वस्तु को सरलता से परिचित कराने पर विशेष बल देता है।

पाठ को बोधगम्य बनाना :– शिक्षक छात्रों से इस प्रकार संवाद करता है कि छात्र को भाषा एवं उसकी व्याख्या सुगम एवं साफ ढंग से समझ में आ जाये।

उपयोगी लेखन के कौशल का विकास : शिक्षक छात्रों में लेखन कौशल का विकास करता है तथा साथ–साथ ऐसे लेखन कार्य को छात्रों द्वारा करवाता है जो कि छात्र के लेखन कौशल के अतिरिक्त उसके लिये उपयोगी भी हों।

इंटरनेट तथा वेबसाइट के उपयोग का बोध कराना :– सम्प्रेषण प्रणाली में दिन प्रतिदिन नवीन तकनीक एवं सूचनाओं से अवगत रहने के लिये इंटरनेट एवं वेबसाइट का ज्ञान आवश्यक है। अतः छात्रों को इसका सही प्रयोग करना/सिखाना शिक्षक का उत्तरदायित्व है। शिक्षक छात्रों को ऐसी वेबसाइट के विषय में ज्ञान दें जहाँ से वह सूचना व ज्ञान प्राप्त कर अपने भाषा कौशल को अधिक से अधिक कुशल बना सके।

3.7.3 सम्प्रेषण कौशल के प्रकार।

शाब्दिक – शिक्षण का ये कौशल अतिमहत्वपूर्ण है। शिक्षक को चाहिए कि छात्रों में शाब्दिक–कौशल को विकसित करने के लिये विशेष ध्यान दें ताकि छात्र शाब्दिक कौशल में पारंगत हो सकें। शाब्दिक–कौशल के दोनों प्रकार लिखित व मौखिक महत्वपूर्ण हैं।

अशाब्दिक – इसमें मुख मुद्रा, आँखों की भाषा आदि का प्रयोग किया जाता है। यह अत्यन्त कठिन कौशल है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य इस कौशल में पारंगत नहीं होता है। शिक्षक को चाहिए कि अशाब्दिक–कौशल का अधिक से अधिक छात्रों में अभ्यास कराये ताकि वे इस कौशल में भी निपुण हो सकें। ये कौशल कक्षा में अनुशासन आदि बनाये रखने में विशेष उपयोगी है।

श्रवण कौशल – इस कौशल के विकास से छात्रों में श्रवण क्षमता का विकास होता है। जो छात्र बिना पूरी बात सुने बहस करने लगते हैं ऐसे छात्रों को चाहिए कि वे अपने श्रवण–कौशल में वृद्धि करें तथा धैर्यपूर्वक ध्यान से किसी बात को सुने व समझे। इस प्रकार व्यर्थ की बहस से बचा जा सकता है।

भावनात्मक जागरूकता– अशाब्दिक कौशल की भाँति यह कौशल भी अच्छे एवं स्वस्थ संवाद में सहायक होता है। इसमें संवाद करने वाले दो व्यक्तियों के मध्य एक सही समझ पैदा होती है और इस प्रकार से वे भावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए अपने संवाद को आगे बढ़ाते हैं। इस कौशल का निपुण व्यक्ति अपना धैर्य नहीं खोता है।

लिखित सम्प्रेषण कौशल– प्रत्येक छात्र में मौखिक कौशल के साथ–साथ लिखित कौशल का होना अति आवश्यक है। हमें दैनिककार्य, कार्यालयों आदि में लेखन की आवश्यकता होती है। आज के युग में छात्रों को इसका सही एवं पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता। अतः अध्यापक छात्रों को लिखित कार्य देकर छात्रों के लेखन को सुधार सकता है।

दुर्लभ परिस्थितियों में सम्प्रेषण– कभी–कभी ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं जिनमें ये समझ नहीं आता कि किस प्रकार से अपनी बात दूसरों को समझायी जाये। अतः शिक्षक को चाहिए कि विभिन्न परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए छात्रों में कौशल का विकास करे।

3.7.4 कक्षा सम्प्रेषण में सहायक तत्व

सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिये उपयुक्त सामग्री, सम्प्रेषण परिस्थितियों तथा वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान होता है। कक्षा में पर्याप्त मात्रा में प्रकाश का होना, उचित मात्रा में फर्नीचर, गर्मी से बचने के लिए पंखे तथा उचित मात्रा में मनोवैज्ञानिक वातावरण का होना आवश्यक है। सम्प्रेषण कौशल मे अध्यापक का प्रभावी व्यक्तित्व, शिक्षण की शैली आदि भी सम्प्रेषण को प्रभावित करती है।

शिक्षक का कार्यः इस विधि में शिक्षक छात्रों के द्वारा भाषा सीखने में सहायक सुविधाओं को उपलब्ध कराता है एवं उन्हें कक्षा में उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है। इस विधि में शिक्षक एक प्रशिक्षक न होकर सुविधा प्रदाता है जो छात्रों को ऐसी सुविधायें अथवा वातावरण देता है जिससे कि छात्र में भाषा कौशल का भली–भाँति विकास हो सके। यह एक 'गैर–प्रणालीगत' प्रणाली है जो भाषा सीखने के लिये पाठ्यपुस्तक श्रृंखला का उपयोग नहीं करती वरन् पठन एवं लेखन से पूर्व ध्वनि या मौखिक कौशल विकसित करने पर कार्य करती है।

कक्षा की गतिविधि : इस विधि में शिक्षक कक्षा की गतिविधियों का चयन करते हैं जिससे छात्रों में संवाद करने का गुण प्रभावशाली ढँग से विकसित हो सके। सम्प्रेषण विधि का प्रयोग करने वाले शिक्षकों में मौखिक गतिविधियाँ लोकप्रिय हैं ये गतिविधियाँ व्याकरण के अभ्यास अथवा पढ़ने लिखने की गतिविधियों के विपरीत हैं क्योंकि इसमें शिक्षक छात्रों के सक्रिय वार्तालाप, रचनात्मकता एवं प्रतिक्रियाओं पर विशेष बल देता है। क्रियाकलाप छात्रों के भाषा वर्ग स्तर के आधार पर अलग–अलग हो सकते हैं।

कक्षा सम्प्रेषण में बाधक तत्व : कक्षा में प्रश्न किस प्रकार किये जा रहे हैं, ये एक ऐसा विषय है कि बहुत से शिक्षक उचित प्रश्न नहीं पूछ पाते हैं। इसके अतिरिक्त छात्रों में रुचि का भी अभाव रहता है। सम्प्रेषण की सामग्री भी उचित मात्रा में उपलब्ध नहीं रहती है। अध्यापक सम्प्रेषण के दौरान यह निर्णय नहीं कर पाता कि छात्र को पूरी एवं सही जानकारी प्राप्त हो रही है अथवा नहीं। सम्प्रेषण के लिये आदर्श वातावरण भी विद्यालयों में उपलब्ध नहीं हो पाता है।

सारांश आधुनिक एवं नवाचार परक शिक्षण की ये विधि प्रभावशाली है परन्तु इसके लिये उचित वातावरण तथा व्यवस्था होना अत्यन्त आवश्यक है। अभावग्रस्त विद्यालयों तथा अप्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा इस विधि का उपयोग कारगर नहीं है।

3.8 अभ्यास प्रश्न

3.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 व्याकरण का क्या अर्थ है? भाषा शिक्षण में इसका क्या स्थान है?

2 व्याकरण शिक्षण की कौन–कौन सी प्रणालियाँ हैं?

3 सम्प्रेषण का अर्थ बताइये। भारतीय संदर्भ में सम्प्रेषण–प्रणाली कितनी प्रभावशाली है? व्याख्या करें।

4 ढाँचागत शिक्षण पद्धति से क्या अभिप्राय है? यह पद्धति किस प्रकार शिक्षण को प्रभावशाली बनाती है? उदाहरण सहित स्पष्ट करें।

5 हिन्दी व्याकरण–शिक्षण में आगमन एवं निगमन विधि का अधिकांशतः प्रयोग क्यों किया जाता है? वर्णन कीजिये।

3.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1 सम्प्रेषण प्रणाली के गुण एवं दोषों पर रोशनी डालिए।

2 प्रत्यक्ष विधि के गुणों पर चर्चा कीजिये।

3 ढाँचागत शिक्षण विधि की विशेषताएँ लिखिये।

4 व्याकरण शिक्षण का क्या महत्व है ?

5 सम्प्रेषण विधि के कौन कौन से सिद्धांत है ?

3.9 संदर्भ

- मधु, नरूला, हिन्दी शिक्षण, ट्वन्टी फर्स्ट सेन्चुरी पब्लिकेशन्स,पटियाला, 2013
- पी.के. ओझा, हिन्दी शिक्षण, अनमोल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005
- शर्मा, राजकुमारी, हिन्दी शिक्षण, राधा प्रकाशन, आगरा, 2006
- wikipedia.org/wiki/Main_Page विकिपीडिया डॉट ओआरजी
- https://www.oxforddictionaries.com/

इकाई – 4 : हिन्दी सूक्ष्म शिक्षण एवं शिक्षण कौशलों का विकास

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 सूक्ष्म शिक्षण (MICRO TEACHING)

4.3.1 अर्थ एवं परिभाषा

4.3.2 सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया के सोपान

4.4 प्रमुख शिक्षण कौशल

4.4.1 प्रस्तावना कौशल

4.4.2 प्रश्न सहजता कौशल

4.4.3 खोजपूर्ण प्रश्न कौशल

4.4.4 उद्दीपक परिवर्तन कौशल

4.4.5 प्रश्न कौशल

4.4.6 उदाहरण कौशल

4.4.7 पुनर्बलन कौशल

4.4.8 व्याख्या कौशल

4.5 व्याख्या कौशल के लिए सूक्ष्म पाठ–योजना–1

4.6 अभ्यासात्मक प्रश्न

4.6.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

4.6.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

4.7 संदर्भ

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हिंदी भाषा शिक्षण में कौशलों का विकास एवं सूक्ष्म शिक्षण का महत्व तथा इससे संबंधित विभिन्न अंगों पर विचार किया जायेगा। भाषा एक ऐसा विषय है जिसमें ज्ञान तथा कौशल दोनों का महत्व होता है। शिक्षक को शिक्षार्थियों में ज्ञान तथा कौशल दोनों से संबंधित योग्यताओं के विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहना होता है। भाषा के पाठ अपनी विषय वस्तु की दृष्टि से अलग–अलग क्षेत्रों से संबंधित होते हैं और पाठ शिक्षण के समय पाठों में निहित विषय विशेष से संबंधित तथ्यों, संदर्भों आदि को स्पष्ट करने के लिए शिक्षार्थियों को उससे संबंधित सामग्री का अध्ययन करने के लिए निर्देशित करने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार किसी साहित्यकार की रचना पढ़ाते समय उसकी शिक्षण की विभिन्न विधाओं के विषय में जानकारी अत्यंत आवश्यक है। इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि शिक्षक के पास स्वंय भी अपेक्षित जानकारी उपलब्ध हो। भाषा के पाठों की बहुआयामी प्रकृति के कारण उन्हें विभिन्न तरीकों से पढ़ाया जा सकता है एवं पाठ की विषयवस्तु एवं सामग्री के अनुसार शिक्षण के विभिन्न कौशलों के माध्यम से यह कार्य सम्पन्न हो सकता है। प्रस्तुत इकाई में इन विभिन्न प्रकार के कौशलों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के साथ सूक्ष्म शिक्षण के विषय में जानने का प्रयत्न किया गया है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- हिंदी भाषा के शिक्षण कौशलों के अर्थ, परिभाषा एवं महत्व को बता सकेगें।
- शिक्षण कौशल पर आधारित पाठ योजना का निर्माण कर सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण के अर्थ और परिभाषा को बता सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण की विशेषताओं की व्याख्या कर पायेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण की विभिन्न अवस्थाओं को समझ कर प्रयोग कर सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण की प्रक्रिया एवं सोपानों को समझकर पाठ योजना में प्रयोग कर सकेंगे।

4.3 सूक्ष्म शिक्षण

'सूक्ष्म शिक्षण' शिक्षण प्रक्रिया में एक बढ़िया एवं सरल आयाम है। 'सूक्ष्म शिक्षण' शब्द का प्रयोग सबसे पहले सन् 1963 में स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के डी. एलन ने किया था। धीरे–धीरे यह प्रयोग इतना सफल और मान्य रहा कि भारतवर्ष में बहुत–सी संस्थानों ने इसका प्रयोग प्रारंभ किया। बड़ौदा और अबोहर के अनुसन्धानिक प्रयोग की सफलता के परिणामस्वरूप सन् 1976 से इसे शिक्षण–कॉलेजों का अभिन्न अंग बना दिया गया क्योंकि यह समझा गया कि शिक्षण–कार्य से संबंधित विभिन्न कौशलों से परिचय और उनका विकास किए बिना ही प्रशिक्षण के लिए भेजना उतना ही अविवेकपूर्ण है, जितना किसी तैराक को बिना तैराकी सिखाए पानी में

धकेल देना। शैक्षणिक तकनीकी द्वारा इन कमियों और दोषों को दूर करने के लिए कुछ नवाचारों को विकसित किया गया है।

4.3.1 अर्थ एवं परिभाषा

'सूक्ष्म' का शाब्दिक अर्थ है – 'लघु'। शिक्षण के संदर्भ में देखा जाए तो 'लघु शिक्षण'। शिक्षक–प्रशिक्षण महाविद्यालयों के अंतर्गत चलने वाले अध्यापक–प्रशिक्षण कार्यक्रम में कुशलता प्राप्त करने के लिए लघु स्तर पर एक–एक शिक्षण–कौशल पर अभ्यासरत होते हुए कक्षा के समग्र शिक्षण को पूर्णता की ओर ले जाना ही 'सूक्ष्म–शिक्षण' है। शैक्षिक तकनीकी द्वारा विद्यार्थी अध्यापक अपने 5–10 मिनट के नियोजित पाठ को विभिन्न कौशलों में वांछित सुधार से निपुणता कर सकते हैं। इससे विद्यार्थी अध्यापक को पर्याप्त विश्वास हो जाता है कि वह कक्षा में पाठ को प्रभावी ढंग देने के योग्य बन सकता है। इससे समय, धन और सामग्री की बचत के साथ–साथ अध्यापक अध्यापन–कार्य को पर्यवेक्षण (सुपरवाइज़र) विश्लेषण करके उसे पृष्ठपोषण करता है।

एलन (1966) के अनुसार, ''सूक्ष्म–शिक्षण से तात्पर्य शिक्षा क्रिया के उस सरलीकृत लघु रूप से है, जिसे थोड़े विद्यार्थियों वाली कक्षा के सामने अल्प समय में सम्पन्न किया जाता है।''

मैक एलीज़ एवं अन्विन (1970) के अनुसार, ''शिक्षण प्रशिक्षार्थी द्वारा सरलीकृत वातावरण में किए गए शिक्षण–व्यवहारों को तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान करने के लिए क्लोज़ सर्किट टेलीविज़न के प्रयोग को प्रायः 'सूक्ष्म–शिक्षण' कहा जाता है।''

एल. सी. सिंह के अनुसार, ''सूक्ष्म शिक्षण शिक्षा का वह सरलीकृत लघु रूप है, जिसमें किसी अध्यापक द्वारा किन्हीं पाँच विद्यार्थियों के समूह को 5–20 मिनट तक की अल्प विधि में पाठ्यक्रम की एक छोटी इकाई का शिक्षण प्रदान किया जाता है। इस प्रकार की परिस्थिति किसी अनुभवी अथवा अनुभवहीन अध्यापक को नवीन शिक्षण–कौशलों का अर्जन करने और पूर्व अर्जित कौशलों में सुधार लाने के लिए उपयोगी अवसर प्रदान करती है।''

एन. के. जंगीरा एवं अजीत सिंह के अनुसार, ''सूक्ष्म शिक्षण विद्यार्थी अध्यापक के लिए प्रशिक्षण का वह प्रारूप है जिसमें सामान्य कक्षा–शिक्षण की जटिलताओं को निम्न उपायों द्वारा कम करने का प्रयास किया जाता है–

- पाठ्यवस्तु को किसी एक संप्रत्य तक ही सीमित करना।
- एक समय में एक ही शिक्षण–कौशल का अभ्यास करना।
- कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या कम करके 5–10 के बीच रखना।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी तकनीक है जिससे कम अनुभवी अध्यापक अपनी शिक्षण–कार्य में वांछित सुधार से प्रभावी ढंग से शिक्षण प्रदान कर सकता हैं

और प्रशिक्षार्थी की प्रक्रिया में कुशलता अर्जन के लिए तय स्तर पर एक–एक पल पर तकनीकी ढंग से किए अभ्यास से शिक्षण–कला को पूर्णता की ओर ले जा सकता है।

4.3.2 सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया के सोपान

सैद्धांतिक ज्ञान देनाः छात्र अध्यापक सूक्ष्म शिक्षण में प्रयोग आने वाले शिक्षण–कौशलों का व्यावहारिक अभ्यास देने से पहले सूक्ष्म शिक्षण से संबंधित जो सिद्धांत हैं, उनकी जानकारी देकर सूक्ष्म शिक्षण से परिचित करवाता है। इसमें अर्थ, इसका उपयोग, महत्व आदि का ज्ञान देना आवश्यक है।

शिक्षण–कौशलों का ज्ञानः सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया में आने वाले कौशलों का ज्ञान भी देने की आवश्यकता है। शिक्षण–कौशलों की महत्ता की जानकारी देना आवश्यक है, क्योंकि यदि इसके महत्त्व के बारे में ज्ञान नहीं दिया गया तो अभ्यास में वह अपनी सजगता नहीं दिखायेंगे। स्थूल शिक्षा में कौन–कौन से कौशल होने चाहिए, विद्यार्थी उन्हीं पर अभ्यास करेंगे।

अध्यापक द्वारा कौशल के आदर्श रूप की प्रस्तुतिः विशेषज्ञ द्वारा या ट्रेनिंग कॉलेज के अध्यापक द्वारा छात्राध्यापक के सम्मुख किसी एक या दो कौशल का नियोजित पाठ देना ज़रूरी है। इसको वीडियो टेप भी किया जा सकता है, जिससे इसको फिर से देखा जा सके।

छात्राध्यापक द्वारा पाठ–योजनाः छात्राध्यापक अपने निरीक्षक या अध्यापक की सहायता से सूक्ष्म पाठ देने से पूर्व सूक्ष्म पाठ योजना तैयार करता है। इस समय वह एक ही निर्धारित कौशल की एक ही पाठ–योजना तैयार करेगा।

पाठ–शिक्षणः छात्राध्यापक विद्यार्थियों के एक छोटे समूह जिसमें लगभग 6 से 10 विद्यार्थी हों, को छोटी अवधि (6 मिनट) में अपने उस निर्धारित कौशल को लेकर पाठ प्रस्तुत करता है। यहाँ पाठ का निरीक्षण आवश्यक होता है क्योंकि एक ही बार में दिया पाठ उस निर्धारित कौशल को विकसित नहीं करता है, तो उस पाठ को देखना तथा मूल्यांकन करना आवश्यक होता है।

निरीक्षणः निरीक्षक (अध्यापक, विशेषज्ञ), सह निरीक्षक द्वारा वीडियो टेप या ऑडियो टेप, सी. सी.टी.वी. द्वारा किया जा सकता है।

पृष्ठपोषण एवं विचार–विमर्शः सूक्ष्म शिक्षण का यह सोपान सब सोपानों में अधिक महत्वपूर्ण है। इससे अध्यापक को अपने पढ़ाए हुए पाठ के विषय सम्बन्धी प्रतिपुष्टि उसी समय प्राप्त हो सकती है। इसका ज्ञान होने पर वह संशोधन कर वांछित सुधार से अवगत होता है। अगर सम्भव हो सके तो इसके लिए ऑडियो टेप, क्लोज़ सर्किट टेलीविज़न आदि की भी सहायता ली जा सकती है। सहपाठी से भी पृष्ठपोषण लिया जा सकता है।

पुनः पाठ–योजना बनाना : विभिन्न स्रोतों से प्राप्त प्रतिपुष्टि के आधार पर छात्राध्यापक अपने सूक्ष्म शिक्षण पाठ की पुनः योजना बनाता है। इस कार्य के लिए उसे 12 मिनट का समय मिलता है।

पुनः अध्यापनः 6 मिनट की इस अवधि में पुनः निर्मित पाठ–योजना के आधार पर वही शिक्षण परिस्थितियों में छात्राध्यापक अपने सूक्ष्म शिक्षण पाठ को एक बार फिर पढ़ाता है। कक्षा का आकार, अवधि, पाठ्य सामग्री निश्चित पुनर्व्यवस्थित रूप में होती है।

पुनः प्रतिपुष्टिः पुनः निर्मित पाठ्यसामग्री को पढ़ाने के पश्चात् सहयोगी छात्राध्यापकों द्वारा एक बार फिर पर्यवेक्षण करने पर पुनः पृष्ठपोषण दिया जाता है।

सूक्ष्म शिक्षण चक्र की पुनरावृत्तिः अध्यापक प्रक्रिया को प्रभावी बनाने हेतु किए गए शिक्षण–कौशल के अभ्यास में सूक्ष्म शिक्षण चक्र की आवृत्ति होती है जिसको इस तरह समझा जा सकता है– पाठ–योजना – शिक्षण – पृष्ठपोषण – पुनर्नियोजन – पुनः शिक्षण – पुनः पृष्ठपोषण। सूक्ष्म शिक्षण छात्राध्यापक किसी विशेष शिक्षण–कौशल के लिए प्रस्तुत एक सूक्ष्म शिक्षण चक्र की पुनरावृत्ति तब तक करता है, तब तक कि उस कौशल में वांछित सुधार नहीं हो जाता।

शिक्षण–कौशलों का समन्वयः यह सोपान शिक्षण–कला को प्रभावी बनाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह उन सभी शिक्षण–कौशलों को एकीकृत करने से सम्बन्धित है, जिन्हें एक–एक कर छात्राध्यापक अभ्यासरत होते हैं। शिक्षण–कौशलों को समन्वित करना आवश्यक होता है क्योंकि वास्तविक कक्षा–शिक्षण में शिक्षण–कौशलों का समन्वित रूप से शिक्षण–कार्य होता है न कि पृथक उपयोग से।

सामान्य शिक्षण में विशिष्ट कौशलों का समन्वय होता है। शिक्षण कार्य से सम्बन्धित विभिन्न कौशलों को जानने के लिए अनुसंधानकर्त्ताओं एवं शिक्षाशास्त्रियों ने कोशिश की है। एलन और रॉयन ने 14 शिक्षण कौशल बताए हैं, जबकि बोर्न एवं उसके सहयोगियों की ओर से 18 शिक्षण–कौशलों का वर्णन किया गया है। बड़ोदा विश्वविद्यालय के उच्च शिक्षा केन्द्र में हुए अनुसंधान के परिणामस्वरूप प्रो. पासी ने इनकी संख्या 21 बताई है। परंतु जंगीरा व सहयोगियों ने शिक्षण–कौशलों की संख्या 20 बताई है। इस तरह अध्यापन प्रक्रिया में इन कौशलों का महत्व है। किसी सूक्ष्म शिक्षण परिस्थिति में इनकी संख्या कम या अधिक हो सकती है। सूक्ष्म–शिक्षण का उद्देश्य शिक्षण–कौशलों में अभ्यासरत होना व उनकी आपूर्ति करना है। शिक्षक को इसके लिए प्रयासरत रहने की आवश्यकता है। सूक्ष्म–शिक्षण के लिए जैसे पाठ के प्रारंभ से ही कहा गया है कि सूक्ष्म पाठ–योजना तैयार कर किसी एक कौशल को लिया जाता है और पाठ 5–6 मिनट तक उसी कौशल से सम्बन्धित होता है। उचित अभ्यास से उस कौशल को विकसित किया जाता है। सूक्ष्म–शिक्षण द्वारा शिक्षण–कौशलों के अभ्यास कार्य उदाहरण के माध्यम से निम्नलिखित है।

4.4 प्रमुख शिक्षण कौशल

शिक्षण कौशल– प्रत्यक्ष रूप से अध्यापक अधिगम को सरल एवं सहज बनाने के उद्देश्य से किये जाने वाले शिक्षण कार्यों के व्यवहारों का समूह 'शिक्षण कौशल' या 'अध्यापन कौशल' कहलाता है।

4.4.1 प्रस्तावना कौशल

प्रस्तावना कौशल का सम्बन्ध पाठ को प्रारम्भ करने से पूर्व की क्रिया से है। इस कौशल से सम्बन्धित सूक्ष्म पाठ तैयार करने के लिये हमें पूर्वज्ञान, सम्बन्ध–श्रृंखलाबद्ध सहायक सामग्री का ध्यान रखना चाहिए। प्रस्तावना कौशल में प्रस्तावना अधिक लम्बी या अधिक छोटी नहीं होनी चाहिए। इस कौशल में 5 से 7 मिनट का समय लगता है। प्रस्तावना से बालक पाठ के अध्ययन में रुचि लेगा। इस कौशल में अध्यापक छात्रों से प्रश्न, कहानी कहकर या किसी का उदाहरण देकर या निदर्शन से या पाठ का सार या मन्तव्य बताकर इसमें किसी भी तकनीक या कथन का सहारा ले सकता है। इसके लिए तीन प्रकार के प्रश्नों का उपयोग भी करता है–

1 प्रत्यास्मरण प्रश्न– ऐसे प्रश्न जिनका जवाब बालक पूर्व ज्ञान पर आधारित एवं आसानी से दे सकें।

2 निबंधात्मक प्रश्न– शिक्षक ही पूछता है एवं स्वयं ही जवाब देता है।

3 आज्ञापालन प्रश्न– जिनका जवाब 'हाँ' या 'ना' में दे सके।

4.4.2 प्रश्न सहजता कौशल

कक्षा–शिक्षण में प्रश्न पूछने की प्रक्रिया का बड़ा महत्व है। प्रश्न के माध्यम से अध्यापक विद्यार्थी को अधिक चिन्तनशील बनाता है तथा विद्यार्थियों के ज्ञान, बोध, रुचि, अभिवृत्ति आदि का पता लगाता रहता है। सहज प्रश्न कौशल से अभिप्राय है– प्रश्न एवं शिक्षक की भाषा सहज हो।

शिक्षण प्रक्रिया के आधार पर तीन प्रकार के प्रश्न यथा प्रस्तावना प्रश्न, शिक्षणात्मक प्रश्न एंव परीक्षणात्मक प्रश्न होते हैं।

अध्यापक को प्रश्न पूछते समय धैर्य तथा सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार रखना चाहिए।

विषय–वस्तु व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध प्रश्न विद्यार्थियों से पूछना चाहिए। इसमें गति और विराम का भी ध्यान रखना चाहिए। उचित संख्या में प्रश्न सरल एवं स्पष्ट पूछने चाहिए।

4.4.3 खोजपूर्ण प्रश्न कौशल

शिक्षक अपने विद्यार्थियों से विषय–वस्तु के गहन अध्ययन एवं गहराई तक पहुँचने के लिए विद्यार्थियों से खोजपूर्ण प्रश्न पूछता है।

यह एक ऐसा कौशल है जो विद्यार्थियों की नई खोज, नवीन जानकारी कल्पना करने आदि के लिए प्रेरित करता है। खोजपूर्ण प्रश्न पूछने से विद्यार्थियों के ज्ञान को काम में लिया जा सकता है। शिक्षक द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर देने में विद्यार्थी असमर्थता प्रकट करे तो शिक्षक को विषय–वस्तु से सम्बन्धित आलोचनात्मक सजगता के लिए खोजपूर्ण प्रश्न पूछना चाहिए । ध्यान रखने योग्य–

- छात्रों का ध्यान केन्द्रित करने वाले प्रश्न होने चाहिए।
- आगे की सूचना खोजने वाला प्रश्न होना चाहिए।
- अर्थ संकेतक होना चाहिए।
- गलत उत्तर देने पर प्रश्नों के माध्यम से धीरे–धीरे सही उत्तरों की ओर ले जाना।

4.4.4 उद्दीपक परिवर्तन कौशल (Skill of Stimulus Variation)

शिक्षक अपने विद्यार्थियों से कोई अपेक्षित अनुक्रिया की प्राप्ति के लिए किसी उद्दीपक का प्रयोग करता है। जैसे– चित्र दिखाना, इशारा करना, वस्तु व श्यामपट्ट, नक्शे को देखना, प्रश्न पूछना, आवाज़ में उतराव, चढ़ाव इत्यादि कई प्रकार के उद्दीपक हैं, जिनकी सहायता से वह विद्यार्थियों का ध्यान अपनी ओर तथा पाठ की ओर केन्द्रित करने का प्रयास करता है। यह अध्यापक के लिए भी पाठ की प्रस्तुति को प्रभावी बनाने में लाभप्रद रहती है।

उद्दीपक परिवर्तन कौशल के लिए निम्नलिखित बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए–

- शिक्षक को उद्दीपक परिवर्तन में शिक्षण व्यवहार सम्बन्धी कुछ घटकों का प्रयोग करना पड़ता है। उसे अपने सहज रूप से ही प्रदर्शन करना होता है जिससे विद्यार्थी–वर्ग उसकी ओर आकर्षित रहे, जिससे उनका ध्यान व रुचि पाठ की ओर बनी रही।
- वह अपने साधनों को आवश्यकतानुसार ही प्रयोग करे, किसी उद्दीपक का अधिक समय तक प्रयोग या उसको बार–बार दोहराने से उसकी प्रभावशीलता खत्म हो जाती है।
- उसके उद्दीपक परिवर्तन में स्वाभाविकता का होना अति आवश्यक है। वह बनावटी न लगे, नहीं तो विद्यार्थी हँसने लगते हैं। कक्षा का वातावरण पठनीय नहीं रहता। ध्यान केन्द्रिता भंग होती है।

4.4.5 प्रश्न कौशल

जिज्ञासा को शांत करने के लिए प्रश्न उठता है, फिर उस उत्तर से विद्यार्थी को धीरे–धीरे पाठ्यसामग्री बोधगम्य होने लगती है। प्रश्न पूछना कला है जो कि शिष्य को पढ़ाने के लिए प्राचीन काल में गुरु उपयोग में लाया करते थे। बड़े–बड़े ग्रंथों का आरंभ भी प्रश्न से होता हुआ हम देखते हैं। ऋषियों–मुनियों के संवाद प्रश्न से ही चलते थे। कक्षा में भी पूर्व ज्ञान परीक्षण भी अधिकतर प्रश्न से प्रारंभ होती है फिर आगे शिक्षण प्रक्रिया चल पाती है। सच तो यह है कि शिक्षक के लिए यह एक ऐसा उचित माध्यम है, जिसमें अध्यापक व विद्यार्थी अंतःक्रिया करते हैं और इससे छात्रों को पढ़ाने के लिए विषयवस्तु के प्रति आकर्षण बना रहता है। इस प्रकार प्रश्न पूछने से शिक्षण क्रिया को प्रभावी बनाया जा सकता है।

बोसिंग महोदय का कहना है – ''प्रश्न करने की कला का महत्व स्वीकारें बिना कोई भी शिक्षण विधि सफलतापूर्वक लागू नहीं की जा सकती है।''

अतः शिक्षक के लिए यह ज़रूरी है कि प्रश्न कैसे, कहाँ और क्यों पूछना है – इन सब में कुशलता प्राप्त करना आवश्यक है। वह अन्य शिक्षण कौशलों की भाँति इसमें पारंगत होना चाहिए।

4.4.6 उदाहरण कौशल

कई बार छात्रों के सामने किसी सिद्धांत, नियम या अमूर्त विचार को स्पष्ट करना कठिन हो जाता है तो ऐसी स्थिति में अध्यापक उदाहरण या दृष्टांत से समझाने का प्रयत्न करता है। कठिन विषय को आसान करने लिए, कुछ उपर्युक्त परिस्थितियों का सामना करने के लिए अध्यापक को निम्न उपायों को प्रयोग में लाना होता है–

- वह अपना विषय उदाहरण से प्रारंभ कर सकता है और उस किसी सिद्धांत, कठिन, विचार, नियम को स्पष्ट करने के लिए दृष्टांत रूप सामने रखना पड़ सकता है।
- फिर इन उदाहरणों का विश्लेषण करते हुए सामान्यीकृत नियम तथा सिद्धांत से संबंधित उदाहरण देने के लिए छात्रों को प्रेरित किया जाता है, जिससे पता चलता है कि उदाहरण के माध्यम से नियम समझे गए हैं या नहीं।
- शाब्दिक क्रिया के दृष्टांत के लिए कोई घटना, कहानी सुनाना, तुलना करना, प्रसंग बताना हो सकता है।
- अशाब्दिक क्रिया में वस्तुएँ, मॉडल, चित्र, आर्ट इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है।

अतः कठिन तथ्यों की व्याख्या के लिए अध्यापक द्वारा अपनाई गई यह कला, जिसमें वह उदाहरणों और दृष्टांतों का प्रयोग कर विद्यार्थियों को उनकी मंज़िल तक पहुँचाने में सहायता करती है।

ध्यान रखने योग्य बातें :

सार्थक उदाहरणों का प्रयोगः सार्थक उदाहरण वह होता है जो कठिन विषय–वस्तु को सरल करने में सहायक हो और विद्यार्थी और अध्यापक आश्वस्त हो सकें कि उन्हें यह समझने में आसानी हो गई है।

सरल उदाहरणों का प्रयोगः सरल उदाहरणों से तात्पर्य है कि ऐसे उदाहरण का प्रयोग करना जिनको पहले से ही वह समझ चुका है। उनके मानसिक स्तर की अनुकूलता को ध्यान में रखना आवश्यक है।

रोचक उदाहरणों का प्रयोगः इनका अर्थ है कि विद्यार्थी कठिन तथ्यों को समझने में रुचि दिखा रहे हैं या नहीं। जब अध्यापक कोई उदाहरण देकर उन्हें समझाता है तो उनकी उस विषय सम्बन्धी जिज्ञासा बनी रहनी चाहिए।

आगमन से निगमन की ओरः किसी नियम को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण प्रस्तुत करना, उसका विश्लेषण, सामान्यीकरण करते हुए नियम स्थापित करना। नियम की स्थापना को प्रयोग में लाना। एक विद्यार्थी उसी तरह की उदाहरण देने में सक्ष्म हो सके।

4.4.7 पुनर्बलन कौशल

अध्यापक की हमेशा कोशिश रहती है कि छात्रों को ज्ञान मिलता रहे। वह ऐसे तरीके, ढंग, क्रियाएँ, प्रतिक्रियाएं करता है जिससे छात्र पढ़ने के लिए उत्सुक रहे। इसके लिए उसे पुनर्बलन प्रदान करना पड़ता है जिससे वह उत्साहित रहते हैं। उत्साह का वर्धन करने पर विद्यार्थी शीघ्र सीखता है।

पुनर्बलन का अर्थ : ओलिवर के अनुसार, ''अध्यापक द्वारा की गई प्रशंसात्मक मौखिक प्रतिक्रिया पुनर्बलन है।'' लीउहम और अनविन के अनुसार, ''विद्यार्थियों को उनकी प्रगति की सूचना प्रदान करना ही उन्हें पुनर्बलन प्रदान करता है। इससे उनके व्यवहार को उन्हीं के द्वारा प्रस्तुत करने की सम्भावना बढ़ती है।'' अतः पुनर्बलन से छात्र शक्ति अर्जित करते हैं। सीखने के लिए विद्यार्थियों को प्रशंसात्मक तथा प्रतिक्रिया व्यक्त करना आवश्यक रहता है। जब विद्यार्थी उत्तर देता है उसके पुनर्बलन हेतु अध्यापक उसे शाबाश कहता है या गुस्सा दिखाता, मुस्कुराता है जिससे वह ठीक मार्ग पर चलता रहता है और उसका सीखना स्थाई बनता है।

पुनर्बलन को दो ढंगों सकारात्मक और नकारात्मक के तौर पर लिया जा सकता है

– सकारात्मक पुनर्बलन वह होता है जिसमें पुरस्कार, प्रशंसा प्रदान करके थपथपाते हुए आगे बढ़ाता है, जिससे विद्यार्थी और अधिक उत्तर देने के लिए स्वयं को तैयार करता है और मानसिक बल भी मिलता रहता है। इसमें वह बोलकर यानि शाब्दिक रूप से कुछ कहता है, जैसे – ठीक है, शाबाश!, बहुत अच्छा, अच्छा किया, सुन्दर, अति सुन्दर

इत्यादि। मूक रूप से प्रगट करने के लिए उसे पीठ थपथपाना, गर्दन हिलाना, मुस्कराना, हँस पड़ना इत्यादि करना।

– नकारात्मक पुनर्बलन में छात्र के ग़लत उत्तर देने पर सही उत्तर निकलवाने के अध्यापक की ओर से क्रिया (प्रयास) होती है, परंतु इसमें अध्यापक का उद्देश्य विद्यार्थी को ऊपर उठाना ही होता है। शाब्दिक के लिए उदाहरण – नहीं नहीं, ध्यान से बताओ, मैंने ऐसा तो नहीं बताया, सोचो, उँहू आदि कहना। अशाब्दिक के लिए उदाहरण – सिर हिलाना, त्योरी चढ़ा कर देखना, आँखें दिखाना, बात को ध्यान से न सुनना।

पुनर्बलन कौशल के लिए महत्वपूर्ण बातेंः

सकारात्मक पुनर्बलन : छात्राध्यापक कक्षा में सकारात्मक पुनर्बलन अर्थात् शाबाश, बोलो, ठीक कह रहे हो, आपको आता है, ध्यान से सोचो आदि कहें। जहाँ तक हो सके सकारात्मक पुनर्बलन प्रदान करें।

वितरण : पुनर्बलन का वितरण सबको हो, सिर्फ गिने–चुने विद्यार्थियों को देने से कुछ विद्यार्थी जो कमज़ोर हैं, हतोत्साहित हो जाते हैं। पुनर्बलन में नियमितता आवश्यक है। प्रत्येक उत्तर के लिए यह प्रक्रिया नहीं होनी चाहिए।

आवश्यकतानुसार : छात्रों के उत्तर देने पर ही दें। ज्यादा देने से उसका मूल्य, प्रभाव कम होगा और विद्यार्थी उत्साहित नहीं होते। पुनर्बलन में छात्रों का नाम, ले तो आत्मीयता बढ़ती है। 'हाँ तू बता', 'खड़े हो जो', 'ओ पिंक कमीज़ वाले' इत्यादि कहना सर्वथा अनुचित है।

नकारात्मक पुनर्बलन : नकारात्मक पुनर्बलन की जहाँ आवश्यकता हो, को दिया जा सकता है, परंतु उसमें अध्यापक अपने उद्देश्य से भटके नहीं, न ही इसमें वैयक्तिक निष्ठता आए। किसी के अनुशासनहीन होने पर या अनुचित व्यवहार पर समझाना चाहिए परंतु इससे पहले उसकी बात को ध्यान से सुनना अध्यापक का कर्त्तव्य बनता है।

स्वाभाविकता : पुनर्बलन स्वाभाविक हो व दिल से निकले। जानबूझकर दिया गया पुनर्बलन का प्रभाव नहीं रहता। बल्कि विद्यार्थी इसे अध्यापक से उपनाम के रूप में प्रयोग करना शुरू कर देते हैं। अध्यापक सम्मान को ठेस लगती है। स्वाभाविक, उचित रूप से दिये गए पुनर्बलन प्रभावी बनकर उनको अधिक पढ़ने के लिए सहज ही विवश कर देती है। एक ही शब्द को बार–बार दोहराना भी उचित नहीं रहता। अतः स्वाभाविकता का होना आवश्यक है।

4.4.8 व्याख्या कौशल

व्याख्या कौशल से अभिप्राय : शिक्षण–कार्य में बहुत ही ऐसी पाठ्यसामग्री होती है, नियम व सिद्धांत होते हैं, जिन्हें समझना बहुत ही आवश्यक होता है। अध्यापक के लिए आवश्यक है कि वह विद्यार्थियों को ग्राह्य बना सके। उसके लिए पाठ में सरलता लाने व व्याख्या करने से पाठ बोधगम्य हो जाता है। व्याख्या करने से अर्थ है कि पाठ्य सामग्री पर आधारित वे कथन जो

सार्थक सरल क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत किए जाते हैं। यह एक ऐसी तकनीक है जो किसी भी प्रकार की कठिन पाठ्य सामग्री को सरल बना देती है। व्याख्या के लिए अध्यापक को निम्नलिखित प्रकार से व्याख्या करनी होती है–

वर्णनात्मक : इसमें पाठ्य–सामग्री में आए नियम एवं सिद्धांत का वर्णन करना होता है। अध्यापक उस वर्णन में किसी भी साधन का प्रयोग कर सकता है।

अर्थात्मक : कई बार अर्थ बता देने से विद्यार्थी उस नियम को समझ जाते हैं।

तर्कशीलता : विद्यार्थियों को कई बार ऐसी पाठ्य सामग्री को समझना होता है, जिसमें उनके प्रश्न आते हैं– क्यों, कैसे? तो इनके उत्तरों को देने के लिए अध्यापक व्याख्या के लिए तर्क से उत्तर देता है। इनको 'कारण बताने वाले कथन' भी कहा जाता है। शिक्षक को तर्क से काम लेना पड़ता है।

4.5 व्याख्या कौशल के लिए सूक्ष्म पाठ–योजना–1

पाठ–योजना–1

छात्राध्यापक का अनुक्रमांक : .... कक्षा – आठवीं

विषय : हिन्दी समय – 6 मिनट

उपविषय : पेड़–पौधे और हम दिनांक : ....

सत्र : शिक्षण

कौशल : व्याख्या

छात्राध्यापक : बच्चों बढ़ती बीमारियों और प्रदूषण से होने वाले विनाश के महत्व को समझते हुए इस विषय 'पेड़–पौधे और हम' का अध्ययन करेंगे।

विषयवस्तु : प्रकृति का मनुष्य से सीधा सम्बन्ध रहा है। सभ्यता के आदिकाल से मनुष्य पूरी तरह प्रकृति पर निर्भर रहा है। हमारे पूर्वजों ने पेड़–पौधों को अपने जीवन का हिस्सा माना और उपयोगिता को पहचाना। यही कारण है कि उन्होंने प्रकृति से नाता जोड़ा और चिरकाल तक प्रकृति से तालमेल बनाए रखा। हरे–भरे जंगल, चहचहाते पक्षी आज कल्पना का विषय बन

गए हैं। भूकंप, बाढ़ आदि प्रकृति की ओर से मनुष्य को दी गई चेतावनी है। वास्तविकता यह है कि बढ़ती आबादी और आधुनिक जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जंगलों को बड़ी बेरहमी से काटा गया, जिसके कारण मौसम चक्र बदल गया और परिणामस्वरूप कहीं सूखा और कहीं बाढ़ देखने को मिलती है। मनुष्य आज पेड़–पौधों से नाता तोड़ने के दुष्परिणाम झेल रहा है।

छात्राध्यापक क्रियाएँ	छात्र क्रियाएँ
बच्चों ! इस पाठ में मानव–जीवन में पेड़–पौधों के महत्व पर प्रकाश डाला गया है क्योंकि आज नये–नये उद्योगों के खुलने, बढ़ते नगर और बढ़ती आबादी से, प्रदूषण से बहुत–सी समस्याओं ने घेरा डाला है। विद्यार्थियों, ''ऐसी कौन–सी समस्याएँ हैं, जो पेड़–पौधों की कमी के कारण से हो रही हैं।'' (प्रश्न दोहराते हुए) कौन–कौन सी समस्याएँ हो रही हैं?	मानसिक बीमारियाँ इत्यादि। सेहत का खराब होना।
हमारे दादा, दादी, नाना–नानी, पूर्वजों ने पेड़–पौधों की पूजा इसलिए की क्योंकि मानव–जीवन को बनाए रखने के लिए ये अत्यन्त उपयोगी हैं। अच्छा बच्चों ! यह बताओ कि आपके दादा जी कौन–कौन से वृक्ष व पौधों को पानी देते रहे हैं? इन पेड़–पौधों की कमी से अब वह चहचहाते पक्षी नहीं रहे हैं। हम नित्य प्रति विभिन्न जगहों पर भूचाल, बाढ़, सूखा आदि से अत्यंत नुकसान का सामना कर रहे हैं। बच्चों ! मई के महीने में भूचाल कहाँ आया है ? कितने लोग मरे हैं ? तो यह सब पेड़–पौधों से अपना नाता तोड़ने के कारण है। हम पेड़–पौधों का ध्यान नहीं रखते, न ही नए पेड़–पौधे उगाते हैं। हमें अपने जन्मदिन पर एक पेड़ लगाना चाहिए और उसे सम्भालकर रखना चाहिए। क्या आप जन्मदिन में एक पेड़ लगाकर उसकी देखभाल करेंगे ? हमें अपनी खुशी को प्रकृति से तालमेल स्थापित करने	मानसिक बीमारियाँ।

में प्रकट करना चाहिए और हमें वृक्षों को काटने से रोकने के प्रयत्न करने चाहिए।	हमारे दादा, दादी जी पीपल, वट, केले, तुलसी को पानी देते थे। यह जापान में आया था। वहाँ हजारों की संख्या में लोग मरे थे। जी हाँ, हम उगायेंगे और इनके महत्व को भी समझेंगे।

4.6 अभ्यासात्मक प्रश्न

4.6.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सूक्ष्म–शिक्षण से क्या अभिप्राय है? इसकी प्रकृति एवं विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. सूक्ष्म–शिक्षण के सोपानों का उल्लेख कीजिए।
3. शिक्षण के विविध कौशलों का संक्षिप्त विवरण दें।
4. शिक्षण के प्रशिक्षण के लिए सूक्ष्म–शिक्षण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए इसकी आवश्यकता को बताएँ।
5. किसी एक शिक्षण कौशल पर आधारित सूक्ष्म पाठ–योजना बनाइए

4.6.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1 हिंदी शिक्षण में सकारात्मक पुर्नबलन का क्या महत्व है ?

2 आपके अनुसार शिक्षण में नकारात्मक पुर्नबलन होना चाहिए? उदाहरणों सहित व्याख्या कीजिए।

3 व्याख्या कौशल का शिक्षण में क्या महत्व है ? स्पष्ट करें।

4 उदाहरण कौशल का शिक्षण में क्या महत्व है ? स्पष्ट करें।

5 'प्रश्न पूछना शिक्षण का अहम कौशल है' व्याख्या कीजिए ।

4.7 संदर्भ

- सफाया, रघुनाथ, हिंदी शिक्षण विधि, पंजाब किताब घर, जालंधर।
- मुकर्जी, संध्या, भाषा शिक्षण, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ।
- पाण्डेय, रामशकल, हिंदी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- क्षत्रिया, के., मातृभाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- सिंह, निरंजन कुमार, माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी शिक्षण, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
- कौशिक, जयनारायण, हिंदी शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी।
- लाल, रमन बिहारी, हिंदी शिक्षण, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ।

इकाई 5– भाषा साहित्य और सौंदर्य

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 सृजनात्मक भाषा के विविध रूप

5.3.1 साहित्य के विविध रूप

5.3.2 विद्यालयी पाठयक्रम में साहित्य को पढ़ना–पढ़ाना

5.3.3 हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य एवं हिन्दी की विभिन्न विधाओं को पढ़ाने के उद्देश्य

5.4 साहित्यिक अभिव्यक्ति के विविध रूप

5.4.1 पद्य की विभिन्न विधाओं को पढ़ना–पढा़ना

5.4.2 गद्य की विभिन्न विधाओं को पढ़ना–पढा़ना

5.4.2.1 कहानी

5.4.2.2 जीवनी

5.4.2.3 आत्मकथा

5.4.2.4 संस्मरण

5.4.2.5 रेखाचित्र

5.4.2.6 यात्रा–वृंतात

5.4.2.7 गद्य की अन्य विधाओं के शिक्षण के उद्देश्य

5.4.2.8 गद्य की अन्य विधाओं के शिक्षण की विधियाँ

5.5 नाटक को पढ़ना–पढ़ाना

5.5.1 नाटक शिक्षण के उद्देश्य

5.5.2 नाटक शिक्षण की विधियाँ

5.6 समकालीन साहित्य की पढ़ाई

5.6.1 बाल साहित्य

5.6.2 दलित साहित्य

5.7 हिन्दी की विविध विधाओं के आधार पर गतिविधिओं का निर्माण

5.7.1 कविता की पाठ योजना

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

5.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

5.9 संदर्भ

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप सृजनात्मक भाषा के गद्य और पद्य शिक्षण के विषय में अध्ययन करेगें। जिसमें हम भाषा शिक्षण में हिंदी शिक्षण के उद्देश्य एवं हिंदी की विविध विधाओं को पढ़ने– पढ़ाने के उद्देश्यों का अध्ययन करेंगे। सर्वप्रथम कविता शिक्षण का महत्व, कविता शिक्षण के उद्देश्य, कविता वाचन का महत्व, कविता के शिल्पगत एवं काव्यसौंदर्य तत्वों का और प्रविधियों का भी अध्ययन करेगें। गद्य की विधाएं निबंध, कहानी, एकांकी, जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण एवं यात्रा–वृतांत आदि हैं। प्रस्तुत इकाई में गद्य और पद्य की विभिन्न विधाओं की विशेषताओं का अध्ययन करेगें तथा विधाओं की शिक्षण विधि से भी परिचित होंगे। इसके अलावा हम समकालीन साहित्य की पढ़ाई के अंतर्गत बाल साहित्य, दलित साहित्य और स्त्री साहित्य का भी अध्ययन करेगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- विद्यालयी पाठयक्रम में साहित्य को पढ़ने का महत्व बता सकेंगे ।
- हिंदी शिक्षण के उद्देश्यों को समझ कर विद्यार्थियों को पढ़ा सकेंगे।
- कविता शिक्षण का महत्व बता सकेंगे।
- कविता शिक्षण की विभिन्न विधाओं का प्रयोग अध्यापन में कर सकेंगे।
- गद्य शिक्षण की विभिन्न विधाओं का प्रयोग अध्यापन में कर सकेंगे।
- कविता और कहानी से संबंधित पाठ योजना बना सकेंगे।

5.3 सृजनात्मक भाषा के विविध रूप

भाषा की सृजनात्मकता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि मैं आपके सामने नहीं हूँ फिर भी आप से बात कर सकता/सकती हूँ। विख्यात भाषाविद् चोम्स्की जिसने व्यवहारवाद की बुनियाद को चुनौती देते हुए कहा कि भाषा किसी आदत निर्माण या अनुकरण की देन नहीं अपितु मनुष्य की अन्तर्जात क्षमता है। चोम्स्की के इस विचार से पृथक यदि हम यह विश्वास कर लें कि भाषा को नकल या अनुकरण से सीखा जाता है तो अनजाने में हम सृजनात्मकता को महत्वहीन कर देते हैं। आपने भी अपने अकादमिक जीवन में हिन्दी साहित्य अवश्य ही पढ़ा होगा। गौर करें कि हिन्दी का सम्पूर्ण साहित्य क्या एक जैसा ही है? केवल हिन्दी ही नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं, अंग्रेजी व उर्दू भाषा में भी आप समान रूप से साहित्य के विविध रूप देख सकते हैं। यह भाषा की सृजनात्मकता ही है कि विभिन्न प्रकार की शैलियों का साहित्य आज हमारे सम्मुख है।

5.3.1 साहित्य के विविध रूप

साहित्य शब्द का अभिप्राय मूलतः से समान रूप से सबका हित करने वाला लिया जाता है। आप साहित्य और उसके लिखने के संदर्भ में बहुत से रूपों को देख सकते हैं। हिन्दी साहित्य में बहुत सी विधाएं हैं। इन विधाओं को आप मूल रूप से दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। गद्य और पद्य

गद्य : उपन्यास, एकांकी, नाटक, कहानी, पत्र, आदि ।

पद्य : कविता, गीत, आदि।

आप अगले बिन्दुओं में इन्हें अधिक विस्तार से पढ़ेंगे।

5.3.2 विद्यालयी पाठयक्रम में साहित्य को पढ़ना–पढ़ाना

विद्यालय पाठयक्रम में साहित्य को पढ़ने पढ़ाने के कई आयाम हैं। साहित्य अपने आप में एक ऐसी विषय वस्तु है जिसमें आप विभिन्न प्रकार की विषयगत और अंतरविषयात्मक संदर्भ और विमर्श देख सकते है। साहित्य के संदर्भ में जितना महत्वपूर्ण उसकी विषयवस्तु है उससे भी अधिक महत्वपूर्ण उस भाषा की लेगेसी होती है। भाषा का यही गुण उस भाषा को और उसके साहित्य को समृद्ध बनाता है। जहां तक हिन्दी साहित्य की बात है तो हिन्दी भाषा के साहित्य की अपनी एक समृद्ध और व्यापक परंपरा है। हिन्दी साहित्य की यह परंपरा आदिकाल से आधुनिक काल में भी गद्य की परंपरा से लेकर आज विभिन्न प्रकार के लेखन शैलियों तक आती है। इसमें आप आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल की एक विशाल परंपरा को देख सकते हैं। लेखन की प्रत्येक परंपरा और शैली हिन्दी साहित्य में मिलती है। हिन्दी साहित्य का अध्ययन और स्कूली पाठ्यक्रम में इसे पढ़ना और पढ़ाना अध्येताओं के भीतर साहित्य के मर्म और संवेदनाओं को उतारने के उद्देश्य से परिपूर्ण होता है। स्कूली पाठयक्रम की हिन्दी भाषा की पाठ्यपुस्तकों में आप साहित्य की विभिन्न शैलियों के पाठों को देख सकते हैं जैसे– आपने भी अपने स्कूल के दिनों में प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'ईदगाह', 'बड़े भाई साहब', इनके उपन्यास 'निर्मला', 'सेवासदन', 'कबीर के दोहे', बच्चन की 'मधुशाला', सुभद्रा कुमारी चौहान की प्रसिद्ध कविता 'खिलौने वाला' और 'झाँसी की रानी', जयशंकर प्रसाद का प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त', हरिशंकर परसाई का प्रसिद्ध व्यंग्य 'एक था आम' और 'एक था ठूंठ', महादेवी

वर्मा छायावादी कविता नीर भरी दुख की बदली आदि को पढ़ा होगा। इतना ही नहीं साहित्य की नई विकसित होती परंपरा दलित साहित्य और स्त्री साहित्य जिन्हे विमर्श की संज्ञा दी जाती है। उनके भी अंश वर्तमान पाठ्यचर्या में देख सकते हैं जैसे–एनसीईआरटी की हिन्दी की पुस्तक में दलित साहित्य के तौर पर ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन'। साहित्य की इस पढ़ाई में आपको समाज के हर उस वर्ग की आवाज सुनाई पड़ेगी जो समाज के अंतिम छोर पर खड़ा है। आप दिव्यांग जन से जुड़े सरोकारों को भी देख सकते हैं फिर वो एनसीईआरटी की पाठयचर्या मे संकलित हेलेन केलेन की जीवनी हो या संगीता की 'पहिया कुर्सी 'या फिर अपने पैर खो चुके जन की कहानी 'जहाँ–चाह वहाँ राह' हो । साहित्य की इन विविध प्रकार की विषयसामग्री के बतौर आप समझ सकते हैं कि स्कूली पाठ्यचर्या में साहित्य की पढ़ाई का सम्पूर्ण अर्थ संवेदनाओं को जाग्रत करना है।

5.3.3 हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य एवं हिन्दी की विविध विधाओं को पढ़ने पढ़ाने के उद्देश्य

बच्चे/बच्ची अपने माता–पिता, परिजनों से सुन कर और उस माहौल में रहकर अनायास ही सीख जाते हैं। वे जब स्कूल जाते/जाती हैं तब उनके पास इस भाषा का समृद्ध संसार होता है। साथ ही स्कूल की भाषा का भी एक रूप होता है। कुल मिलाकर उनके पास अनेक भाषाओं का संसार होता है। इसे समाज की बहुभाषिक स्थिति कह सकते हैं। दरअसल बहुभाषिकता भारतीय समाज के भाषा बोध की रचनात्मक सच्चाई है। वह हमारी परम्परा और संस्कृति का अभिन्न अंग है। बच्चे/बच्ची की मौलिकता एवं सहज रचनाशक्ति को सामने लाना हिंदी भाषा शिक्षक का प्राथमिक दायित्व है। लिहाज़ा आत्मीय माहौल बनाना उसकी ज़िम्मेदारी है। इस माहौल में ही विभिन्न भाषाई कालों का विकास संभव है। कहना न होगा कि हिंदी शिक्षण का दायरा इतना व्यापक होना चाहिए कि उसमें उल्लिखित सारे सरोकार शामिल हों। भाषा बच्चे/बच्ची के रोजमर्रा के जीवन का हिस्सा है, यह समझे बिना स्कूल में हिंदी शिक्षण की कोई अवधारणा नहीं बन सकती। भाषा शिक्षण के लिए स्कूल में कोई कार्यक्रम शुरू होता है तो हमें बच्चे की सहज भाषाई क्षमता को पहचानना होगा और समझना होगा कि भाषाएँ

सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से बनती हैं एवं हमारे प्रतिदिन के व्यवहार से बदलती है। (41: 2005 राष्ट्रीय पाठयचर्या की रूपरेखा, एन.सी.ई.आर.टी, दिल्ली)

हिंदी अनेक रूपों में प्राथमिक बच्चे/बच्चियों के जीवन का हिस्सा बनती है। कहीं वह माध्यम भाषा के रूप में तो कहीं विषय के रूप में इस तरह हिंदी शिक्षण को केवल साहित्य तक सीमित करना, उसके व्यापक दायरे को संकुचित करना होगा। विभिन्न विषयों के अध्ययन के दौरान समझ, अवधारणाएं भाषा में ही बनती है। लिहाज़ा अन्य विषयों के अध्ययन के दौरान भी हिंदी की भूमिका है। राष्ट्रीय पाठयचर्या इसे विशेष तौर पर रेखांकित करती है । भाषा शिक्षण केवल भाषा कक्षा तक ही सीमित नहीं होता है। विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गणित की कक्षाएँ भी एक तरह से भाषा सीखने का अवसर प्रदान करता है। किसी विषय को सीखने का मतलब है उसकी अवधारणाओं को सीखना, उसकी शब्दावली को सीखना उनके बारे में आलोचनात्मक ढंग से चर्चा करना और उनके बारे में लिख सकना। (42: 2005 राष्ट्रीय पाठयचर्या की रूपरेखा, एन. सी.ई.आर.टी , दिल्ली)

5.4 साहित्यिक अभिव्यक्ति के विविध रूप

5.4.1 कविता

कविता मानव भावनाओं का सुंदरतम और कलात्मक शब्दों में किया गया वर्णन है। कविता आदिकाल से ही मानव संवेदनाओं को जीवंत रूप देने और जीवन में आनंद का संचार करने का काम करती आई है। भाषा शिक्षण में कविता शिक्षण का विशेष महत्व है इसके अध्ययन से अध्येताओं को भावात्मक संतुष्टि मिलती है । कविताओं में मानवीय गुणों का विकास करने की अदभुत शक्ति होती है तथा उनकी सौन्दर्यात्मक अनुभूति एवं कल्पनाशक्ति में वृद्धि होती है। जैसा की हमने पहले भी चर्चा की है कि कविता सीधे ह्रदय तक पहुँच जाती है। इस दृष्टि से अध्यापक को कविता के माध्यम से विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण करने में सहायता मिलती है। भाषा शिक्षण कि दृष्टि से भी कविता शिक्षण का बहुत महत्व है। कविता शिक्षण से विद्यार्थियों को

भाषा के विविध रूपों और अभिव्यक्ति की विभिन्न शैलियों का ज्ञान प्राप्त होता है और यही ज्ञान उसे अपनी विशेष रचना–शैली विकसित करने में भी सहायता करता है। कविता के मूल तत्व, भाव–सौन्दर्य, भाषा सौन्दर्य, विचार सौन्दर्य और कल्पना सौन्दर्य है।

- भाव सौन्दर्य कविता में भावों की प्रधानता होती है। इसमें हर्ष, उल्लास, रोष, करुणा, शोक, प्रेम आदि सभी प्रकार के भावों का समावेश होता है। हमने अभी ऊपर सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता 'झाँसी की रानी' की चर्चा की थी। स्मरण करें इस कविता में कौन सा भाव था या इन्हीं की कविता 'खिलौने वाला' को स्मरण करें कि उसमें कौन सा भाव था ।

- भाषा सौन्दर्य प्रत्येक कविता का अत्यंतम महत्वपूर्ण पहलू है। अभिव्यक्ति का प्रभावपूर्ण वर्णन ही कविता है। भाषा सौन्दर्य में आप नाद, शब्द और चित्रात्मकता का सौन्दर्य देख सकते हैं। कविता में वर्णों कि आवृति, दोहराव, उसकी गेयता, उचित यति–गति ही नाद है। शब्द की योजना–अर्थ और भाव का सुंदर समावेश है। जिसे आप अलंकार कह सकते है। चित्रात्मकता कविता का वह भाषिक गुण है जो आपके सामने कविता को पढ़ने और विशेष अर्थों में सुनने योग्य बनाता है। यह कविता का वह भाषिक तत्व है जो अमूर्त संवेदना को मूर्तरूप प्रदान करता है।

- विचार सौन्दर्य कविता में आए और पिरोये हुए वह मूल्य, आदर्श और संस्कार हैं जो हमे उससे जुड़ने पर मजबूर करते हैं।

- कल्पना सौन्दर्य कविता का वह तत्व है जो कवि की कल्पना को शाब्दिक रूप में बदल देता है। कविता कल्पनाशक्ति का अद्‌भुत नमूना होती है । कवि द्वारा उसकी नायिका की कल्पना महान कवि मलिक मोहम्मद जायसी के पद्‌मावत में देखी जा सकती है। इतना ही नहीं सूरदास ने जन्मांध होने के बाद भी कृष्ण का जो रूप अपनी कविताओं और पदों में व्यक्त किया है वह कल्पना सौन्दर्य की लाजवाब मिसाल कही जा सकती है।

उपरोक्त वर्णन से हम यह समझ सकते हैं कि कविता कि पढ़ाई क्यों आवश्यक है ? उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर हम कविता की पढ़ाई के कुछ उद्देश्य निर्धारित कर सकते हैं जैसे –

- कविता की पढ़ाई के दौरान सस्वर पठन की कुशलता विकसित करना।
- कविता पढ़ने के बाद उसकी समीक्षा करने की योग्यता का निर्माण।
- कविता को उचित यति–गति, आरोह–अवरोह के साथ गाना।
- कल्पना शक्ति विकसित करना
- पठित अथवा उच्चरित कविता के अर्थ, भाव एवं कल्पना को साथ–साथ ग्रहण करने और उनकी व्याख्या करने की योग्यता विकसित करना ।
- कविता रचने की आदत विकसित करना।

कविता की पढ़ाई मूल रूप से उपरोक्त उद्देश्यों के अनुरूप की जा सकती है। इसी प्रकार कविता को पढ़ने–पढ़ाने की कुछ विधियाँ भी दृष्टव्य है।

गीत विधि– इस विधि में अध्यापक कविता को उचित यति–गति, आरोह–अवरोह के साथ गा कर सुनाता है और बाद में छात्र–छात्राएँ उसी यति–गति, आरोह–अवरोह के साथ कविता का पाठ करते हैं। यह सबसे प्रचलित और उपयोगी विधि है।

अभिनय विधि– यह गीत विधि का ही एक विकसित रूप है। इस विधि में अध्यापक उचित यति–गति, आरोह–अवरोह के साथ–साथ उचित भाव–भंगिमाएँ बनाकर, भिन्न भिन्न प्रकार के अभिनय करते हुए कविता पाठ करता है और बाद में छात्र–छात्राएँ उसी यति–गति, आरोह–अवरोह के साथ उचित भाव–भंगिमाएँ बनाकर, भिन्न भिन्न प्रकार के अभिनय करते हुए कविता पाठ करते हैं। यह विधि छात्र– समूह के साथ भी की जा सकती है।

शब्दार्थ कथन विधि– इस विधि में अध्यापक सबसे पहले कविता का पठन करता है। इसके उपरांत कविता की प्रत्येक पंक्ति में आए शब्दों का अर्थ बताता चलता है। इस प्रकार कविता में आए शब्दों के अर्थ और भाव तथा प्रत्येक पंक्ति का वर्णन अध्यापक कर देता है। इस प्रकार

सम्पूर्ण कविता का अर्थ बताने के बाद अध्यापक द्वारा सम्पूर्ण कविता का सरलार्थ कर दिया जाता है।

व्याख्या विधि– इस विधि में सबसे पहले कविता का सस्वर पठन किया जाता है तथा बाद में बच्चों से कविता का पाठ करवाया जाता है । उसके बाद कविता को खंडों में बाँटकर उनकी व्याख्या की जाती है। इस विधि में पढ़ने पढ़ाने वाले आपस में प्रश्न–उत्तर करके कविता के खंडों की व्याख्या करते हैं। इस प्रकार पूरी कविता की व्याख्या शब्द–अर्थ, भाव और विचार के आधार पर की जाती है। इसके अतिरिक्त कविता के प्रति रुचि बढ़ाने के साधन भी प्रयुक्त किए जा सकते हैं जैसे– कविता गोष्ठी, कविता लेखन, अंत्याक्षरी तथा कवि सम्मेलन आदि।

5.4.2 गद्य की विभिन्न विधाओं को पढ़ना–पढ़ना

5.4.2.1 कहानियाँ

कहानियाँ सुनना–सुनाना प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को भाषा सीखने में बहुत मदद करती है। कहानी सुनना बच्चों के लिए रुचिकर होने के साथ–साथ उनकी सृजनात्मकता को भी बढ़ाने वाला होता है। कई बार बच्चे सुनी हुई कहानी में मनचाहा बदलाव करके अपने मित्रों को सुनाते हैं। इसके द्वारा बच्चे न केवल शब्दों के अर्थ बल्कि विभिन्न घटनाओं को भी समझने लगते हैं और साथ ही यह बच्चों की कल्पनाशीलता को भी बढ़ाती है। कहानी इस मायने में भी महत्त्वपूर्ण है कि यह बच्चों में अनुमान लगाने की क्षमता बढ़ाती है जैसे– जब कभी बच्चे कहानी सुन रहे होते हैं तो उनकी जिज्ञासा लगातार बनी रहती है कि आगे क्या होगा? वे अपने स्तर पर अनुमान लगाते रहते हैं और अगर कहानी उनकी सोच के अनुरूप आगे बढ़ती है तो वे ज्यादा आत्मविश्वासी होने लगते हैं और समय के साथ–साथ उनके अनुमान ज्यादा सटीक होते जाते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कहानियाँ उनको भावी जीवन के लिए तैयार करने में भी मददगार होती हैं। जैसे– खरगोश–शेर वाली कहानी बच्चों को जीवन में आने वाली मुश्किलों का सामना करने हेतु मानसिक रूप से तैयार करती है। कहानियाँ सुनाते समय हम अपने जीवन के अनुभवों को भी उसमें शामिल करते चलते हैं। कई बार सुनाने वाले को उसमें से कोई बात

ज्यादा महत्त्वपूर्ण लगती है तो वह उस हिस्से को बढ़ा–चढ़ाकर भी सुनाता है। ऐसा करते समय जीवन की घटनाओं, चरित्रों आदि को गढ़ना और उसके द्वारा सुनने वाले का ध्यान आकर्षित करना मुख्य उद्देश्य होता है। साथ ही सुनाने वाले का तरीका और हाव–भाव भी इसकी रोचकता पर प्रभाव डालते हैं तथा जब कहानी में नए शब्दों का उपयोग होता है तो बच्चे हावभाव के साथ सुने गए शब्द से उसके अर्थ का अनुमान भी लगा लेते हैं। यह उनके शब्दकोश, सुनने–समझने और अनुमान लगाने की क्षमता में भी इजाफा करता है। कहानी सुनाकर उस पर चर्चा करना थोड़ा मुश्किल काम है, परन्तु अगर शिक्षक की तैयारी हो कि चर्चा का उद्देश्य क्या है ? तो यह काफी आसान व सफल साधन बन सकता है। बच्चों को कहानी सुनाना जितना जरूरी है उतना ही जरूरी है उनसे कहानी सुनना। इससे बच्चों में अपने आपको अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास होता है। शिक्षक द्वारा सुनायी गई कहानी को दोहराने के अलावा बच्चों से उनकी मर्जी की कहानी सुनना ज्यादा फायदेमंद होता है। कहानी के व्यक्तित्व व चरित्र के बारे में प्रतिक्रिया देते समय वह अपने अनुभवों को भी उसमें शामिल करता है।

मानव जीवन की किसी घटना, भाव आदि पर आधारित कथा को कहानी की संज्ञा दी जाती है। कहानी संक्षिप्त होती है तथा आधुनिक व्यस्त जीवन के लिए उत्कृष्ट साहित्य है। गद्य साहित्य की अनेक विधाओं में कहानी सबसे अधिक लोकप्रिय विधा है। कहानी के निम्नलिखित तत्व होते हैं

कथावस्तुः प्रत्येक कहानी में एक कथानक होता है। जो जीवन के किसी अंश, घटना अथवा मनोभाव पर आधारित होता है।

चरित्र–चित्रणः कहानी में एक या अधिक पात्र होते हैं। पात्रों की विभिन्न चारित्रिक विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करके उनका उल्लेख करने की प्रक्रिया को चरित्र–चित्रण कहते हैं।

कथोपकथनः कहानी में एकांकी की भांति किन्हीं दो पात्रों के मध्य विचार का आदान–प्रदान हो तो उसे कथोपकथन की संज्ञा दी जाती है।

भाषा–शैली: कहानी की भाषा–शैली पात्रों के व्यक्तित्व के अनुसार ऐसी हो जो उनकी मनःस्थिति का सजीव चित्रण प्रस्तुत कर सके। किसी भी पात्र की भाषा विभिन्न परिस्थितियों में परिवर्तनीय होती है।

देशकाल और वातावरण: यह कहानी में व्यक्त समय और समाज का उल्लेख करता है।

उद्देश्य: किसी कहानी में एक निहित उद्देश्य का होना अनिवार्य है। लेखक किसी एक या अनेक जीवन मूल्यों को दृष्टि में रखकर कहानी की रचना करता है।

कहानी शिक्षण के उद्देश्य :

- साहित्य के प्रति रुचि विकसित करना।
- कहानी में निहित भावों, विचारों, नैतिक मूल्यों को ग्रहण करने की क्षमता विकसित करना।
- सृजनात्मक शक्ति का विकास करना।
- शब्द, सूक्ति, मुहावरे आदि के भंडार को समृद्ध करना।
- अंदाजा लगाने की क्षमता का विकास करना ।
- एकाग्रता को विकसित करना।
- कहानी की रचनाशीलता का विकास करना ।
- कल्पना और स्मरण शक्ति का विकास करना।

कहानी शिक्षण विधि तथा सोपान :

प्रस्तावना : सबसे पहले कक्षा में उचित वातावरण बनाकर कहानी कहने का माहौल बनाया जाता है। जिससे कहानी की पढ़ाई को मनोरंजंक और प्रेरणादाई बनाया जा सके ।

कहानी कथन/प्रस्तुतीकरण : प्रस्तावना के बाद इस सोपान में कहानी को मजेदार ढंग से सुनाया जाता है। इस सोपान में कहानी को ऐसे सुनाया जाता है कि कहानी सुनने वाले और कहानी सुनाने वाले आपस में विचारों को बाँट सकें। उचित उतार चढ़ाव और जिज्ञासा के साथ कहानी को सुना और सुनाया जाता है ।

कहानी सुनना/पुनरावृत्ति : इस सोपान में कहानी सुनाने वाला कहानी सुनने वाले से कहानी सुनता है। इस प्रकार कक्षा में एक–एक करके विद्यार्थी कहानी सुनाते है। इस प्रकार कहानी पर चर्चा होती है और बोध प्रश्न भी करवाए जाते हैं । कहानी में नैतिक शिक्षा, भाव, कहानी के चरित्रों, पात्रों पर चर्चा की जाती है।

गृहकार्य : इस सोपान में कहानी से संबन्धित प्रश्नों के आधार पर गृह कार्य करने के लिए दे दिया जाता है।

5.4.2.2 जीवनी

व्यक्ति के जीवन की मार्मिक एवं सारगर्भित घटनाओं के चित्रण को जीवन की संज्ञा दी जाती है। जीवनी में इतिहास के घटनाक्रम एवं उपन्यास की वर्णन रोचकता को वरीयता दी जाती है। चरित्र नायक या नायिका के प्रति लेखक की संवेदना एवं प्रतिभा दोनों महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विवरण प्रस्तुत करते समय यह सावधानी अपेक्षित है कि समस्त सामग्री प्रामाणिक हो। जीवनी लेखक का यह भी पुनीत कर्तव्य है कि वह परिश्रमपूर्वक तथ्य प्राप्त करके उन्हें प्रभावशाली एवं मनोहर शैली में प्रस्तुत करे। जीवनी लेखन के लिए यह भी अपेक्षित है कि लेखक को अपने चरित्र नायक के जीवनपथ की सम्यक जानकारी हो। जीवनी साहित्य के अध्ययन द्वारा विद्यार्थियों के भाषा अधिगम के उद्देश्य में उन्हें विशेष सफलता मिलती है। महापुरुषों के जीवन–चरित्र का प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त करके वे अपने व्यक्तित्व का भी सर्वांगीण विकास कर सकते हैं। जीवनी–पठन में उच्चारण, बलाघात, वर्तनी, शब्द–रूपान्तर, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि, समास, शब्द–भण्डार, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पद बोध तथा वाक्य–संरचना आदि भाषिक तत्वों का ज्ञान भी विद्यार्थी स्वाभाविक विधि द्वारा अर्जित करते हैं। व्यक्तित्व का शारीरिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास करने की दृष्टि से जीवनी का अध्ययन अत्यंत उपयोगी है।

5.4.2.3 आत्मकथा

जब कोई व्यक्ति अपनी जीवनी स्वयं लिखता है तब उसे 'आत्मकथा' से अभिहित किया जाता है। ऐसी रचनाएं उत्तम पुरुष एकवचन में लिखी जाती है। आत्मकथा व्यक्ति के आत्म परीक्षण का श्रेष्ठ साधन है। आत्मकथा द्वारा व्यक्ति विगत घटनाओं के गुण–दोषों के आधार पर आत्म–निर्माण का यत्न भी कर सकता है। कभी–कभी सफल एवं सजग व्यक्ति लोक कल्याण की भावना से भी अपनी आत्मकथा लिखकर समाज को लाभान्वित करने का प्रयास कर सकता है। महान सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं साहित्यिक आंदोलनों के सम्पर्क में रहने वाले महापुरुषों द्वारा लिखित आत्मकथाएं ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण होती है। आत्मकथा लेखक यदि निर्भीक हो तभी अपने दायित्व का निर्वाह कर सकता है। इस दृष्टि से पांडेय बैचेन शर्मा 'उग्र' का 'अपनी खबर' नामक आत्मकथा हिंदी साहित्य को सर्वोत्तम देन है। भगवत शरण उपाध्याय की आत्मकथा 'मैंने देखा' रोचक इतिहास के सन्निकट है। विद्यार्थियों के लिए डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की 'आत्मकथा' विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृति है। उन्होंने अपनी आत्मकथा अपनी मातृभाषा में लिखी तथा वे अत्यधिक मेधावी विद्यार्थी, आदर्श पुत्र, सच्चे देशभक्त तथा सहृदय मानव थे। जीवनी तथा आत्मकथा की शिक्षण प्रक्रिया कहानी शिक्षण के समान ही होगी।

5.4.2.4 संस्मरण

जब स्मृति के आधार पर किसी घटना या व्यक्ति का चित्रण किया जाता है। तब उसे संस्मरण की संज्ञा दी जाती है। संस्मरण में पात्र के प्रति लेखक की अनुभूतियां एवं संवेदनाएं अभिव्यक्त होती हैं। हिन्दी में यह साहित्यिक विधा अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव का परिणाम है। 'सरस्वती', 'विशाल भारत', 'सुधा', एवं 'माधुरी' आदि पत्रिकाओं में अनेक उल्लेखनीय संस्मरण प्रकाशित हुए। इलाचंद्र जोशी कृत 'मेरे पथिक जीवन की स्मृतियां' एवं वृंदावनलाल वर्मा द्वारा रचित 'कुछ संस्मरण' सराहनीय प्रयास हैं। हिन्दी के संस्मरण लेखक बनारसी दास चतुर्वेदी ने 'हमारे आराध्य' कृति के द्वारा संस्मरण लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। शिव पूजन सहाय की रचना 'वे दिन वे लोग' सेठ गोविन्द दास की रचना 'स्मृति कण' प्रकाश गुप्त द्वारा लिखित 'पुरानी स्मृतियां एवं 'कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर' की कृति 'भूले हुए चेहरे', 'दीप जले, शंख बजे' भी हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधियां हैं।

महादेवी वर्मा ने संस्मरणों में साहित्य के क्षेत्र में स्थान बना लिया है। उनकी दो कृतियां—'अतीत के चलचित्र' तथा 'स्मृति की रेखाएं' संस्मरण और रेखाचित्र की मनोहर रचनाएँ हैं। संस्मरणों की श्रृंखला में विनोद शंकर व्यास की 'दिन और रात' कृति भी महत्वपूर्ण है। आज 'संस्मरण' एवं 'रेखाचित्र' में विभाजक रेखा खींचते समय यही कहा जा सकता है कि संस्मरणों में अनिवार्यतः अतीत का परिवेश होता है और रेखाचित्र में समकालीनता की झलक होती है। संस्मरण वस्तुतः आत्मकथा तथा निबन्ध के मध्य स्थित है।

5.4.2.5 रेखाचित्र

किसी व्यक्ति की आकृति, स्वभाव या अन्य विशेषताओं का शब्द चित्र प्रस्तुत किया जाए तब उसे रेखाचित्र की संज्ञा दी जाती है। स्थान अथवा वस्तु का सजीव चित्रण भी रेखाचित्र के प्रकृत क्षेत्र की विभूति बनता है। जैसे कुछ सार्थक रेखाओं से एक सजीव चित्र की सृष्टि करना कुशल चित्रकार की प्रतिभा का परिचायक होता है वैसे ही सार्थक शब्दों में किसी व्यक्ति, घटना स्थान अथवा वस्तु को शब्द—चित्र द्वारा प्रस्तुत करना प्रतिभावान साहित्यकार का कर्म है। प्राचीन साहित्य में व्यक्तियों, पशु—पक्षियों, स्थानों, दृश्यों आदि के अनेक अलंकृत वर्णन काव्य भाषा में उपलब्ध हैं परन्तु स्वतंत्र विधा के रूप में रेखाचित्र का आविर्भाव पश्चिमी साहित्य के प्रभाव की देन है। हिन्दी साहित्य जगत में महादेवी वर्मा एवं रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा रचित 'लाल तारा', 'माटी की मूरतें', 'गेहूँ और गुलाब' तथा 'मील के पत्थर' ऐसे रेखाचित्र हैं जो भारतीय दर्शन, शिक्षा मनोविज्ञान, कला एवं संस्कृति का परिचय देने के साथ—साथ पाठक के मानवीय दृष्टिकोण को भी प्रभावित करने में समर्थ हैं।

5.4.2.6 यात्रा—वृतांत

यात्रा साहित्य प्रदेश विशेष की आंचलिक विशेषताओं की अनुभूति को अभिव्यक्त करता है। यदि पाठक विवरण के साथ तादात्म्य की स्थिति में पहुंच जाए तब यात्रा—वृतांत सफल कहा जाएगा।

यात्रा साहित्य विभिन्न प्रदेशों की आंचलिकता, जन–जीवन तथा समाज से सर्वाधिक परिचय कराता है। यात्रा प्रयास एवं संस्मरण प्रधान होती है। साहसी पुरुष यदि प्रतिभा संपन्न हो तो यात्रा साहित्य द्वारा समाज को निश्चिय ही सम्पन्न कर सकता है। भारत के गौरव राहुल सांकृत्यायन का यात्रा–वृतांत साहित्य अत्यधिक सुव्यवस्थित है। आपके यात्रा साहित्य में भौगोलिक, ऐतिहासिक एवं अर्थशास्त्रीय विवरणों का भी बाहुल्य द्रष्टव्य है। उनका 'घुमक्कड़ शास्त्र' निश्चय ही बेजोड़ है। रामधारी सिंह 'दिनकर' कृत 'देश–विदेश तथा मेरे प्रवास की यात्राएं', यशपाल कृत 'लोहे की दीवार के दोनों ओर', भगवत शरण उपाध्याय कृत 'सागर की लहरों पर', रामवृक्ष बेनीपुरी कृत 'पैरों में घुंघरु बांधकर' विशेष उल्लेखनीय यात्रा–वृतांत हैं। यात्रा–वृतांत की शिक्षण प्रक्रिया कहानी शिक्षण प्रक्रिया के समान है।

5.4.2.7 गद्य की अन्य विधाओं के शिक्षण के उद्देश्य

– साहित्य के प्रति रुचि विकसित करना।
– विधा की रचनाशीलता तथा एकाग्र होकर पाठ को आत्मसात करने की क्षमता का विकास करना ।
– मंच पर अभिनय करने की क्षमता एवं अवसरानुकूल शब्दावली का प्रयोग करने की क्षमता का विकास करना।
– ऐतिहासिक कथाओं, पौराणिक विचारों एवं सामाजिक कुरीतियों से परिचित कराना।
– उचित यति–गति, हाव–भाव, आरोह–अवरोह तथा उतार चढ़ाव के साथ उच्चारण की क्षमता विकसित करना।
– निरीक्षण, कल्पना, बोध एवं विवेचन के गुण विकसित करना ।
– भावों, विचारों, नैतिक मूल्यों को ग्रहण करने तथा सृजनात्मक शक्ति का विकास करना।
– शब्द, सूक्ति, मुहावरे आदि के भंडार को समृद्ध करना।
– अंदाजा लगाने की क्षमता का विकास करना ।
– कल्पना और स्मरण शक्ति का विकास करना।
–

5.4.2.8 गद्य की अन्य विधाओं की शिक्षण विधियाँ

व्याख्या विधि : इस विधि में सबसे पहले पाठ को सुनाया जाता है तथा बाद में बच्चों से पाठ को पढ़वाया जाता है। उसके बाद पाठ को खंडों में बाँटकर उनकी व्याख्या की जाती है। इस विधि में पढ़ने–पढ़ाने वाले आपस में प्रश्न–उत्तर करके पाठ अथवा विषयवस्तु के खंडों की व्याख्या करते हैं। इस प्रकार पूरी विषयवस्तु की व्याख्या शब्द–अर्थ, भाव और विचार के आधार पर कर दी जाती है।

अर्थ कथन : इस विधि में पाठ का सस्वर वाचन कराया जाता है तथा पाठ सुनाने के बाद पाठ के प्रत्येक अंश का अर्थ ग्रहण किया जाता है और चर्चा की जाती है ।

विश्लेषण विधि : इस विधि में प्रश्न और उनके उत्तर के माध्यम से पाठ के तत्वों और भावों पर विचार करते हैं। यह विधि मनोवैज्ञानिक है तथा इसमें बच्चों की सक्रिय भागीदारी रहती है।

शब्दार्थ कथन विधि : इस विधि में अध्यापक सबसे पहले पाठ करता है। इसके उपरांत पाठ की प्रत्येक पंक्ति में आए शब्दों का अर्थ बताता चलता है। इस प्रकार कविता में आए शब्दों के अर्थ और भाव तथा प्रत्येक पंक्ति का वर्णन अध्यापक कर देता है। इस प्रकार सम्पूर्ण पाठ का अर्थ बताने के बाद अध्यापक द्वारा सम्पूर्ण पाठ का संदेश अथवा भाव बता दिया जाता है।

5.5 नाटक को पढ़ना–पढ़ाना

नाटक एवं एकांकी साहित्य की महत्वपूर्ण विधाओं में नाटक का सर्वोत्तम स्थान है। 'काव्येषु नाटकं रम्यं' वाक्य से भारतीय साहित्य में नाटक का महत्व स्पष्ट हो जाता है। नाटक भी कहानी की भाँति किसी घटना का रसात्मक एवं संवादात्मक प्रस्तुतीकरण होता है। नाटक में कथावस्तु के अतिरिक्त संवाद एवं अभिनेता तथा चरित्र–चित्रण प्रमुख तत्व होते हैं। नाटक शिक्षण की प्रमुख तीन विधियां हैंः

आदर्श अभिनय विधि में शिक्षक ही सभी पात्रों के संवाद हाथ के सामान्य अभिनय तथा चेहरे की सामान्य भावाभिव्यक्ति के साथ स्वयं पढ़कर बोलता है तथा उसी के अनुसार शिक्षार्थियों को पाठ का अनुकरण करने के लिए निर्देश देता है। अपेक्षित अंशों की व्याख्या करता है। कक्षा अभिनय विधि में शिक्षार्थी विभिन्न पात्रों के संवाद पढ़ते हैं और पढ़ते समय वे पात्र का नाम नहीं लेते। शिक्षक आवश्यक अंशों की व्याख्या शिक्षार्थियों के सहयोग से करता है। भाषा–शैली, पात्रों का चरित्र–चित्रण तथा जीवन मूल्यों की स्थापना का विश्लेषण कहानी शिक्षण के समान ही होता है। मंच अभिनय विधि में शिक्षार्थी नाटक के पात्रों के संवादों को कंठस्थ कर पूरे अभिनय के साथ नाटक को मंच पर प्रस्तुत करते हैं। यह विधि औपचारिक शिक्षण से हटकर है अतः इसका प्रतिदिन उपयोग नहीं किया जा सकता। कक्षा अभिनय विधि का उपयोग नाटक शिक्षण में सुविधा एवं सुचारु रूप से किया जा सकता है। 'एकांकी नाटक का लघु रूप है जिसमें कथा का विस्तार कई अंकों में न होकर कुछ दृश्यों तक सीमित होता है। इसमें मानव जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक भाव की कलात्मक अभिव्यंजना होती है। स्वरूप की दृष्टि से एकांकी में एक अंक होता है परन्तु दृश्य एक से अधिक हो सकते हैं। कहानी की भांति

एकांकी भी मानव जीवन की व्यस्तता की उपलब्धि है। जिस प्रकार उपन्यास की अपेक्षा कहानी के लेखन एवं पठन में सुगमता होती है। वैसे ही एकांकी लेखन एवं दर्शन भी सुगम होता है।

नाटक शिक्षण के उद्देश्य :

– एकाग्र होकर सुनने की क्षमता का विकास करना ।

– अवसरानुकूल शब्दावली का प्रयोग करने की क्षमता का विकास करना।

– ऐतिहासिक कथाओं, पौराणिक विचारों एवं सामाजिक कुरीतियों से परिचित कराना।

– उचित यति–गति, हाव–भाव, आरोह–अवरोह तथा उतार चढ़ाव के साथ उच्चारण की क्षमता विकसित करना।

– मंच पर अभिनय करने कि क्षमता का विकास करना।

– निरीक्षण, कल्पना, बोध एवं विवेचन के गुण विकसित करना ।

नाटक शिक्षण की विधियाँ :

भूमिका अभिनय : इस विधि में नाटक का कक्षा में मंचन किया जाता है । कक्षा के एक समूह को नाटक का मंचन करने को कहा जाता है। और इस प्रकार कक्षा में नाटक का मंचन करके नाटक को समझ लिया जाता है। इस विधि में साधारण कपड़ों और बिना किसी साजो समान के बच्चों का समूह अभिनय करता है।

रंगमंच अभिनय : यह भूमिका अभिनय विधि का विकसित रूप कहा जा सकता है। इस विधि में नाटक का मंचन रंगमंच पर किया जाता है। स्कूल या कक्षा का एक समूह को नाटक का मंचन करने को कहा जाता है। अध्यापक यहाँ एक नाटक निर्देशक की भूमिका में होता है और इस प्रकार कक्षा में नाटक का मंचन करके नाटक को समझ लिया जाता है। इस विधि में सम्पूर्ण साज–सज्जा तथा पात्रनुकूल परिधानों के साथ बच्चों का समूह अभिनय करता है ।

अर्थ कथन : इस विधि में नाटक सस्वर वाचन कराया जाता है तथा नाटक सुनाने के बाद नाटक के प्रत्येक अंश का अर्थ ग्रहण किया जाता है और चर्चा की जाती है।

विश्लेषण विधि : इस विधि में प्रश्न और उनके उत्तर के माध्यम से नाटक के तत्वों और भाव पर विचार करते हैं। यह विधि मनोवैज्ञानिक है तथा इसमें बच्चों की सक्रिय भागीदारी रहती है।

5.6 समकालीन साहित्य की पढ़ाई

वह साहित्य समकालीन साहित्य है। जिसे अभी साहित्य की मूलशाखा से अलग विकसित होते हुए देखा जा रहा है । मूलरूप से साहित्य विषय आधारित है, मुद्दा आधारित है, हम इसे उस साहित्य शाखा से अलग करके देख सकते हैं, जिसका उल्लेख हमने शीर्षक 'साहित्य की विधाओं' के अंतर्गत किया है। दलित साहित्य, स्त्री साहित्य, बाल साहित्य आदि उसी प्रकार के साहित्य के उदाहरण है।

5.6.1 बाल साहित्य

बाल साहित्य का अभिप्राय बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य से है। इसके अंतर्गत इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है कि किसी कहानी या कविता मात्र में बच्चों के होने से वह बाल साहित्य नहीं हो जाता। इसके लिए जरूरी है कि वह बच्चों के जीवन से जुड़े अनुभवों, उनके द्वन्द्व एवं उनकी कल्पनाओं आदि को ध्यान में रखकर लिखा गया हो। इससे यह बात उभर कर आती है कि बच्चों के साहित्य पर विचार करने के लिए यह जरूरी है कि हमारे मन में बच्चों व बचपन के बारे में एक समझ हो। जिसमें बच्चे को एक जागरूक व जिज्ञासु इंसान के रूप देखना, बाल विकास से जुड़े मुद्दों को समझना व समाज को समझना आदि बातें इसमें शामिल हैं। अगर हम इस दृष्टि से देखें तो यह बात समझ में आती है कि दुनिया में लिखित रूप से बाल साहित्य की शुरुआत अठारहवीं शताब्दी के दौरान हुई। इससे पहले का अधिकतर साहित्य मौखिक परंपरा का साहित्य था। उसमें बच्चों व बड़ों के लिए कोई विभाजन नहीं था।

रामायण व महाभारत की कथाएँ, जातक कथाएँ, पंचतन्त्र की कथाएँ, लोक कथाएँ आदि सभी के सुनने के लिए थीं। इसी तरह पश्चिम में भी एसेप फेबिल्स, गुलीवर्स ट्रैवल्स व राबिन्सन क्रूसो जैसी रचनाएँ भी सभी के लिए थीं। इन पारंपरिक रचनाओं में अधिकतर रचनाएँ नैतिक मूल्यों व उपदेशों पर ही आधारित थीं। इसके उपरांत पश्चिम में जब जॉन लॉक, कमेनियस व रूसो जैसे विचारकों ने भी बच्चों व उनकी शिक्षा के बारे में सोचना शुरू किया तब बच्चों के लिए अलग से लिखे जाने के बारे में सोच–विचार की शुरुआत हुई। परंतु उस दौरान भी बच्चों के बारे में समझ एक खाली स्लेट की ही थी। इसके साथ लिखी जानेवाली रचनाएँ भी समाज के उच्च वर्ग के बच्चों के लिए ही थीं। इन रचनाओं का मुख्य उद्देश्य भी बच्चों को नैतिक उपदेश देना या शिष्टाचार सिखाना ही था। अठारहवीं शताब्दी के दौरान ही जॉन न्यूबेरी ने बच्चों के लिए अलग से साहित्य के बारे में विचार दिया तथा उन्होंने बच्चों के लिए चित्रात्मक पुस्तकें भी लिखीं। इस प्रकार ज्यों –ज्यों बच्चों के बारे समझ गहरी हुई व प्रिंटिंग का विकास हुआ। उसके साथ ही बाल साहित्य भी विकसित हुआ तथा भिन्न –भिन्न प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित होनी शुरू हुईं। चित्र पुस्तकों का प्रचलन भी शुरू हुआ। सिर्फ किताबी उद्देश्यों को पूरा करने का ही मकसद नहीं है उसके साथ–साथ पढ़ने के आनंद से भी जोड़ा गया है। अगर हम अपने देश में भी लिखित बाल साहित्य की बात करें तो इसकी शुरुआत बीसवीं शताब्दी के दौरान ही मानी जा सकती है। इसके अंतर्गत रची जाने वाली अधिकतर सामग्री पर अगर हम गौर करेंगे तो हमें उस दौरान के राजनीतिक व सामाजिक संदर्भ को भी समझना होगा। इस समय के हिन्दी लेखक साहित्य की रचना को एक आत्मविश्वासी और अपनी सांस्कृतिक धरोहर से परिचित समाज का निर्माण मानता था। देशी संस्कृति में गर्व और आत्मनिर्भरता की भावना से ओत –प्रोत साहित्य देश की आजादी के संघर्ष में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। उस समय की अधिकतर रचनाएँ देशभक्ति व नैतिकता पर ही केंद्रित रही हैं जिन्हें हम अपने स्कूली दिनों के दौरान अपनी पाठ्यपुस्तकों में भी पढ़ते रहे हैं। उस दौरान के साहित्य में कहीं–कहीं आजादी के संघर्ष के माहौल में अडिग और आत्मविश्वासी बच्चों के चित्रण को भी देखा जा सकता है। ऐसी ही छवि का अंकन 1933 में प्रेमचन्द द्वारा लिखित कहानी 'ईदगाह' में मिलता है। यह कहानी स्वतंत्र रूप से सोचने वाले एक आत्मविश्वासी बच्चे की छवि को दर्शाती है। बच्चे की यह छवि ही बच्चों के लिए अच्छे साहित्य का आधार के रूप में देखी जाती है। आजादी के

उपरांत तथा प्रकाशन व्यवस्था में परिवर्तन के साथ लोगों की सांस्कृतिक चेतना भी बदली। महानगरीय संस्कृति का विकास हुआ। इसके अंतर्गत बच्चे को एक नन्हे वयस्क की तरह ही देखा गया। इससे बच्चों के पालन –पोषण और विकास के प्रतिमानों में बदलाव आया। इन सबका बच्चों के साहित्य व उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके बीच प्रतियोगिता की भावना को बढ़ावा मिला। उनसे यह अपेक्षा की जाने लगी कि वे जल्दी –जल्दी पढ़ना लिखना सीखें और दूसरों से आगे निकलें। इस तरह की सोच बच्चों की किताबों में भी आसानी से देखी जा सकती है जिनमें बच्चों की जगह बड़े ही सोचते हैं। उनकी सोच ही हावी दिखाई देती हैं। धीरे –धीरे हमारे यहाँ भी बच्चों की शिक्षा में नए विचारों के साथ बाल साहित्य की समझ में बदलाव के प्रयास किए जा रहे हैं। आज बच्चों को ध्यान में रखकर अच्छी किताबें भी प्रकाशित हो रही हैं। इन किताबों का उद्देश्य है कि बच्चे पढने का आनंद लें और इन्हें हमें पहचानना होगा। इस दृष्टि से ही बच्चों के साहित्य को देखा जाना चाहिए।

5.6.2 दलित साहित्य

हिन्दी साहित्य में वैसे तो दलित विचार के साथ कहानियाँ आदि लिखी जाती रही हैं परंतु एक लंबी परंपरा के तौर पर आप इसे नहीं देख सकते । दलित साहित्य हिन्दी साहित्य से इतर एक विमर्श के तौर पर विकसित होती हुई साहित्य की एक शाखा है । दलित साहित्य एक ऐसी साहित्यक परंपरा कही जा सकती है जिसमे दलितों द्वारा उनके साथ हुए सामाजिक व्यवहार की झलक है। इस कड़ी में ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य का ऐसा नाम है जिसने दलित साहित्य को एक दिशा दिखाई, इनका साहित्य उच्च दर्जे का है जिसमें दलितों की संस्कृति का उम्दा उल्लेख मिलता है। ओमप्रकाश का जन्म वाल्मीकि परिवार में हुआ। उनका बचपन सामाजिक एवं आर्थिक कठिनाइयों में बीता। आरंभिक जीवन में उन्हें जो आर्थिक, सामाजिक और मानसिक कष्ट झेलने पड़े उसकी उनके साहित्य में मुखर अभिव्यक्ति हुई है। वाल्मीकि के अनुसार दलितों द्वारा लिखा जाने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है। उनकी मान्यतानुसार दलित ही दलित की पीडा को बेहतर ढंग से समझ सकता है और वही उस अनुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति कर सकता है। इस आशय की पुष्टि के तौर पर रचित अपनी आत्मकथा 'जूठन' में

उन्होंने वंचित वर्ग की समस्याओं पर ध्यान आकृष्ट किया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अस्सी के दशक से लिखना शुरू किया, लेकिन साहित्य के क्षेत्र में वे चर्चित और स्थापित हुए 1997 में प्रकाशित अपनी आत्मकथा 'जूठन' से। इस आत्मकथा से पता चलता है कि किस तरह वीभत्स उत्पीड़न के बीच एक दलित रचनाकार की चेतना का निर्माण और विकास होता है। किस तरह लंबे समय से भारतीय समाज– व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर खड़ 'चूहड़ा' जाति का एक बालक ओमप्रकाश सवर्णों से मिली चोटों–कचोटों के बीच परिस्थितियों से संघर्ष करता हुआ दलित आंदोलन का क्रांतिकारी योद्धा ओमप्रकाश वाल्मीकि बनता है। दरअसल, यह दलित चेतना के निर्माण का दहकता हुआ दस्तावेज़ है। यदि हम उन रचनाओं की बात करे तो उन्होने कविता संग्रह–सदियों का संताप, बस बहुत हो चुका, अब और नहीं, कहानी संग्रह– सलाम, घुसपैठिए और अन्य कई कथाएँ, आत्मकथा– जूठन तथा आलोचना– दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, मुख्यधारा और दलित साहित्य, सफाई देवता, दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ आदि अग्रणी रचनाएँ है । असल में दलित साहित्य हिंदी में एक आंदोलन के रूप में थोड़ी देर से शुरू हुआ. मुख्य रूप से 1990 के बाद यह शुरू हुआ. उसमें जो प्रतिभाशाली लेखक थे, उनमें ओमप्रकाश वाल्मीकि सबसे आगे थे। इन लेखकों की रचनाशीलता की गुणवत्ता के कारण वो मुख्यधारा के समांतर धारा के रूप में स्थापित हुआ और उसे स्वीकार भी किया गया। इतना ही नहीं वाल्मीकि के अतिरिक्त अग्रणी रूप से शरण कुमार लिंबाले की अक्करमाशी , तुलसीराम की मुर्दहिया आदि है। दरअसल हम इन्हे अग्रणी रूप से जानते हैं, परन्तु इसके अतिरिक्त लिंबाले की अन्य 50 रचनाएँ है, इसी तरह वाल्मीकि की भी लगभग 25 अन्य रचनाएँ है, जिन्हे हम नहीं जानते। इसी तरह बहुत सारा दलित साहित्य है जो हमारे सम्मुख नहीं है। दलित साहित्य का अधिकतर हिस्सा वाचिक और मौखिक किस्म का है, जिसे लिखने का बीड़ा खुद दलित लेखकों ने उठाया है। साहित्य के शोध क्षेत्र में वाचिक और मौखिक परम्परा एक महत्वपूर्ण सवाल है। ये सवाल और इसे शोध के दौरान प्रयोग में लाना जरुरी है क्योंकि स्मृति का तत्व इस आत्मकथन में रहता है।

5.7 हिन्दी की विविध विधाओं के आधार पर गतिविधिओं का निर्माण

पाठ योजना विशेष रूप से व्यक्तिगत विचार है। प्रत्येक अध्यापक अपने अनुसार और अपने विचार से पाठ की योजना बना सकता है। जैसा कि आपको मालूम है कि एक तरफ तो मनोवैज्ञानिक स्तर पर शिक्षण– अधिगम के बहुत से सिद्धांत हैं। वहीं दूसरी तरफ दर्शन की पृष्ठभूमि से भी इसके कई सिद्धांत हैं। इसलिए यह तय करना कि कौन किस विधि से और किस विचारधारा से पढ़ाएगा बड़ा ही कठिन काम है। फिर एक विचार और आता है कि अध्यापन का तरीका छात्र केन्द्रित होगा या अध्यापक केन्द्रित। दरअसल इन सभी विचारों के आधार पर पाठ योजना तैयार की जा सकती है। हम आपको यहाँ हर कविता शिक्षण की एक आदर्श पाठ योजना दे रहे हैं। हमने सभी सिद्धांतों का समावेश करने का प्रयास किया है और एक संतुलित पाठ योजना तैयार की है।

5.7.1 कविता की पाठ योजना

कविता साहित्य की एक ऐसी रचना है जो ज्ञेय है जैसा कि अभी आपने ऊपर पढ़ा भी होगा। कविता को अक्सर सुर, लय, ताल का संगम कहा जाता है। कविता को गाया जाता है परंतु आप देखेंगे कि हिंदी साहित्य में नई कविता या अकविता की एक लंबी परंपरा है। नई कविता को आप गा नहीं सकते। ऐसी कविताओं को आप किताबों में देखेंगे भी। तो अब सवाल यह उठता है कि आप ऐसी कविताओं को पढ़ाएंगे कैसे? इसलिए यहाँ एक ऐसी कविता पर ही पाठ योजना दी गई है।

नाम : फरहाना — कक्षा : छठी

विषय : हिन्दी — उपविषय : कविता

विषयवस्तु : झाँसी की रानी (कविता) — समय : 35 मिनट

शिक्षण के सामान्य उद्देश्य (शैक्षिक उद्देश्य) :

- अधिगमकर्ताओं में सुनने, अर्थ ग्रहण करने की क्षमता का विकास करना।
- कविता में आए मूल्यों, विचारों और संदेश को आत्मसात करने के लिए प्रेरित करना।
- उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता पाठ करने के कौशल का विकास करना।
- कल्पना शक्ति का विकास करना।
- काव्य की विभिन्न शैलियों से परिचित कराना।

शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य (शिक्षण अधिगम के उद्देश्य) :

- झाँसी की रानी की कविता में शौर्य शब्द के लिए प्रयुक्त किए गए शब्दों का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे। (ज्ञान से संबंधित)
- कविता में व्यक्त विचारों की अपने शब्दों में व्याख्या कर सकेंगे। (बोध से संबन्धित)
- कविता में प्रयुक्त संज्ञा एवं क्रिया शब्दों का चयन कर सकेंगे । (प्रयोग से संबंधित)
- कविता में प्रयुक्त नए और देशज शब्दों का विश्लेषण कर उनका उल्लेख कर सकेंगे। (विश्लेषण से संबंधित)

अनुदेशात्मक सामग्री : झाँसी की रानी के चित्र सहित कविता लिखा एक चार्ट।

पूर्वज्ञान : बच्चों ने पहले भी देश भक्ति की कविताएं पढ़ी हैं एवं छात्र झाँसी की रानी के नाम से परिचित हैं।

प्रस्तावना प्रश्न :

प्रश्न 1 : देश का पहला स्वतंत्रता संग्राम कब हुआ था । (1857)

प्रश्न 2 : देश के किन किन शहरों में लोगो ने आवाज उठाई । (इनमें एक नाम झाँसी भी होगा)

प्रश्न 3 : देश की किसी एक वीरांगना का नाम बताओ जिसने 1857 के विद्रोह में अंग्रेजों से लोहा लिया। (रानी लक्ष्मीबाई)

उद्देश्य कथन :

आज हम सुभद्रा कुमारी चौहान की शौर्य, ओज, तेजस्व और देशभक्ति से परिपूर्ण कविता 'झाँसी की रानी' पढ़ेगें।

प्रस्तुतीकरण :

झाँसी की रानी कविता का पाठ बच्चों के सक्रिय सहयोग से किया जाएगा।

झाँसी की रानी कविता

शिक्षण बिन्दु	अध्यापक–अध्यापिका क्रियाएँ	छात्र–छात्राएँ क्रियाएँ
कवि परिचय	इस कविता की रचना प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने लिखी है । सुभद्रा कुमारी चौहान ने और भी कई बाल सुलभ कविताएं लिखी हैं खिलौने वाला ऐसी ही एक सुंदर कविता है । सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म उत्तर प्रदेश में हुआ था। (अध्यापिका आवश्यक बिन्दुओं को श्यामपट्ट पर लिखेगी)	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें और श्यामपट्ट पर लिखे बिन्दुओं को अपनी कॉपी पर लिखेंगे।
कविता का सार	अध्यापिका कविता का सार प्रस्तुत करेगी। सुभद्रा कुमारी चौहान की यह कविता शौर्य, ओज, तेजस्व और देशभक्ति से परिपूर्ण है। इस कविता में कवयित्री ने रानी लक्ष्मी बाई के जीवन और उसके बचपन के दिनों को खूबसूरती से लिखा है। इसके बाद अध्यापिका छात्र–छात्राओं को पुस्तक खोलने और उसमे से कविता निकालने को कहेंगी।	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें और अपनी पुस्तक में उक्त कविता के पृष्ठ निकालेंगे।

कविता का आदर्श वाचन	अध्यापिका कविता का उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार आदर्श पाठ करेगी।	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें।
अनुकरण वाचन	अध्यापिका छात्रों और छात्राओं को निर्देश देंगी और इस दौरान कविता का उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता का पाठ करने वाले छात्रों और छात्राओं की शाब्दिक और अन्य अशुद्धियों को ठीक करेंगी ।	अध्यापिका के निर्देश अनुसार कविता का उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता का अनुकरण वाचन करेंगी ।
अर्थ कथन	छात्र अध्यापिका कविता के कठिन शब्दों का अर्थ बताएगी और उन्हें श्यामपट्ट पर लिखेंगी। श्यामपट्ट कार्य मुहँबोली : मान छिबली : शरारती रानी : राजा की पत्नी मर्दानी : मर्दो जैसी तलवार : तेज धार वाला शस्त्र	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें और श्यामपट्ट पर लिखे बिन्दुओं को अपनी कॉपी पर लिखेंगे।
भाव विश्लेषण	अध्यापिका प्रश्न के माध्यम से कविता के भाव, विचार, भाषा और चित्रात्मकता पर चर्चा करेगी और सौन्दर्यानुभूति कराएगी, चर्चा के बाद कविता का मूल संदेश और भाव कक्षा के सम्मुख प्रस्तुत करेगी। प्रश्न– हमारे देश मे आपने और कितनी वीरांगनाओं के बारे में सुना है।	छात्र–छात्राएँ प्रश्न के उत्तर देंगे और चर्चा करेंगे और कविता के भाव, विचार, भाषा और चित्रात्मकता के द्वारा कविता की सौन्दर्यानुभूति करेंगे।

	प्रश्न– इतनी सुंदर लड़की कैसे एक योद्धा बन गई । प्रश्न– कवयित्री का लक्ष्मीबाई को मर्दानी कहने के पीछे क्या मंतव्य हो सकता है ? आदि । उपरोक्त चर्चा के बाद कविता का मूल संदेश और भाव कक्षा के सम्मुख प्रस्तुत करेगी। अध्यापिका कथन– यह कविता देश भक्ति की कविता है। इसमें रानी लक्ष्मीबाई के माध्यम से देश पर अपना सर्वस्व अर्पित करने वाले देशभक्तों और उनकी शक्ति, पराक्रम तथा देशप्रेम को स्मरण करने का और उनके जैसे कर्तव्य निष्ठा का संदेश मिलता है । अपना बचपन और जवानी को देश के नाम कुर्बान करने वाले वीर और वीरांगनाओं की भांति देश के प्रति कुछ कर गुजर जाने का मूल्य भी मिलता है ।	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें और श्यामपट्ट पर लिखे बिन्दुओं को अपनी कॉपी पर लिखेंगे।
कविता का पुनः आदर्श वाचन	अध्यापिका कविता का भाव ग्रहण करने और रस लेने हेतु उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता का पुनः आदर्श वाचन करेंगी ।	छात्र–छात्राएँ ध्यानपूर्वक सुनेगें।

कविता का अनुकरण वाचन	अध्यापिका छात्रों और छात्राओं को निर्देश देंगी और इस दौरान कविता का उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता का पाठ नहीं कर पाने वाले छात्रों और छात्राओं की शाब्दिक और अन्य अशुद्धियों को ठीक करेंगी ।	अध्यापिका के निर्देशानुसार कविता का उचित हाव–भाव, यति–गति तथा आरोह–अवरोह के साथ भावानुसार कविता का अनुकरण वाचन करेंगे ।
अर्थ ग्रहण एवं सौन्दर्य बोध परीक्षण (आकलन)	अध्यापिका छात्रों और छात्राओं से कुछ प्रश्न पूछेंगी। यह प्रश्न इस बात की पुष्टि करने के लिए पूछे जाएंगे कि छात्रों और छात्राओं द्वारा कविता को आत्मसात किया गया है या नहीं ।	अध्यापिका के निर्देश अनुसार कविता से पूछे गए सवालों के जवाब देंगे।

गृहकार्य : अध्यापिका के निर्देशानुसार छात्र और छात्राएँ देश भक्ति से संबंधित दो कविताओं को खोजेंगे और अपनी कॉपी पर लिखेंगे तथा प्रस्तुत कविता झाँसी की रानी को कंठस्थ करके आएंगें।

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 गद्य विधाओं की शिक्षण प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए।

2 कहानी शिक्षण की विधियों का वर्णन कीजिए।

3 दलित साहित्य और स्त्री साहित्य का महत्व बताइए।

4 गद्य की विभिन्न विधाओं में से किसी एक विधा से संबंधित पाठ योजना बनाइए।

5 कविता शिक्षण की विभिन्न विधियों की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिए।

5.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1 कविता के पाठ सौंदर्य विश्लेषण से क्या अभिप्राय है।

2 कविता में आदर्श पाठ का महत्व प्रतिपादित करें।

3 हिंदी भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्य बताइये।

4 कहानी शिक्षण के तत्वों का विवेचन कीजिए।

5 गद्य की विभिन्न विधाओं के नाम बताइये।

5.9 संदर्भ

- सफाया, रघुनाथ, हिंदी शिक्षण विधि, पंजाब किताब घर, जालंधर।
- मुकर्जी, संध्या, भाषा शिक्षण, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ।
- पाण्डेय, रामशकल, हिंदी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- क्षत्रिया, के., मातृभाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- सिंह, निरंजन कुमार, माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी शिक्षण, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
- भाई योगेन्द्रजीत, हिंदी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- सिंह, सावित्री, हिंदी शिक्षण, गया प्रसाद एण्ड संस, आगारा।